M.T.V.Acharya

Photo by P. K. Patel

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

राष्ट्र-प्रदीप

प्रेषिका:
विमला प्रधान, नई देहली

बचपन से ही दांत साफ करने का अभ्यास कराना माता-पिता का प्रमुख कर्तव्य होना चाहिये। बच्चों के छोटी अवस्था का यह अभ्यास दिनचर्या का विषय बन जाता है व थोड़ी सावधानी रखने से जीवन भर दांत के व्याधियों से छुटकारा मिल जाता है—

दि कैलकटा केमिकल कं. लि. ३५, पंडितिया रोड, कलकत्ता-२९

चन्दामामा

विषय-सूची

इनके अलावा फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता, मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर चित्र और कई प्रकार के तमाशे हैं।

ग्राहकों को एक जरूरी सूचना

*

१. ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न हो उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकता।

२. पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते के साथ सूचना देनी चाहिए।

३. प्रति नहीं पाई तो १०-वीं के पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद को आने वाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

—व्यवस्थापक, 'चन्दामामा'

चन्दामामा

संचालक :: चक्रपाणी

अगले माघ से चन्दामामा का नव-वर्षांक शुरू होता है। हमें मालूम है कि नव-वर्षांक से पत्रिका के रूप-रङ्ग तथा सामग्री-संचयन में पाठक-गण परिवर्तन की प्रतीक्षा कर रहे होंगे। इस दिशा में हम प्रयत्नशील हैं। इस अङ्क के अन्तिम पृष्ठों में कुछ टाइप-राइटिङ्ग चित्र प्रकाशित हुए हैं। पाठक देखेंगे कि ये सुन्दर चित्र एक्स x अक्षर से तैयार हुए हैं। यह एक खास ढङ्ग की कला है। इसमें अभिरुचि रखने वाले हमारे पाठक इस तरह के नाना चित्र हमें भेजते रहेंगे—यह हमारी आशा है। इसी अङ्क में एक ११ वर्ष की उमर वाले उदयशङ्कर ने जो सुन्दर रेखा-चित्र तैयार किया है, वह चन्दामामा के आदर का पात्र हुआ है। इसी प्रकार किसी भी ढङ्ग के कला-पूर्ण चित्र अगर हमें प्राप्त होते रहे, तो चन्दामामा अपने पाठकों को प्रोत्साहन देने में कभी पीछे नहीं रहेगा।

वर्ष 4 :: अगस्त 1953 :: अंक 12

वृक्ष-रोपण

एक रास्ते से गुज़रे, एक रोज़ तीन बच्चे;
तीनों की उम्र एक थी, तीनों थे एक जैसे।
बचपन हँसी-खुशी का, फूलों के जैसे चेहरे;
वे राह चल रहे थे-बाँहें गले में डाले

देखा कि एक बूढ़ा, बैठा कमर झुकाए;
धरती पर आम का एक पौधा लगा रहा है।
बच्चोंने दिलमें सोचा—'मरने के दिन हैं इसके;
फिर यह बेचारा बूढ़ा क्यों इतना दुख उठाए?

तब उसके पास जाके पूछा—बताओ, दादा!
दुनियाँमें अब तुम्हारे दमका है क्या भरोसा?
पौधा लगा रहे हो, फल की भी आस है क्या?
फिर कष्ट इस उमर में तुमने है क्यों उठाया?

आराम से गुज़ारो इन आखिरी दिनों को;
यह काम हम जो करते, परिणाम कुछ निकलता
पौधा हमीं, लगाते फल भी हमींको मिलता।
बच्चों की बात सुनकर बूढ़ेने सिर उठाया;

चेहरे की झुर्रियोंसे वह मुस्कुराके बोला—
तकलीफ़ हीसे दुनियाँ आगे बढ़ी है इतनी;
तकलीफ़ हीका फल है—आरामकी घड़ी भी
पौधे नहीं लगें तो, फल पाए कोई कैसे?

* * *

बूढ़े की बात सुन कर, ली राह सबने अपनी,
ऐसा हुआ कि निकली बूढ़ेकी बात सच्ची;
अफ़सोस है कि तीनों बच्चोंकी मौत आई;
निकला जो युद्ध करने जाँ एक ने गवाँई।

गहरी नदीके पानीमें जाके एक डूबा।
ऊँचे पै जो चढ़ा था, वह गिरके बच न पाया।
बूढ़े ने जो कहा था निकला सभी वह सच्चा
फल उसकी मेहनतों का सत्कार पा रहा था।

पुरखों ने ज्ञान पाकर यह बात है बताई—
बूढ़े-बड़ोंकी मेहनत बच्चोंके काम आई।
छोटा है आज पौधा, कल पेड़ यह बनेगा।
देगा यह छाँह ठण्डी, फूलेगा औ फलेगा।

गर मैं नहीं तो मेरी सौ पीढ़ियोंके बच्चे
खुश होंगे मेरी मेहनतसे फ़ायदा उठाके;
तोड़ेंगे वे फलोंको जब नाम लेके मेरा—
समझूँगा मैं कि जगमें जिन्दा है काम मेरा।

बस मेरे वास्ते यह सबसे बड़ी खुशी है।
दुनियामें कौन मुझ-सा तकदीरका धनी है;
आया है जो यहाँ पै, जाएगा वह यहाँ से
कबतक रहेगा कोई—अब कौन यह बताए।

मुख-चित्र

महाभारत के पञ्च पाण्डवों का नाम सभी जानते हैं। पाण्डवों के पिता का नाम था पाण्डु महाराज। उनकी पटरानी का नाम था कुन्तीदेवी। किन्दम नामक ऋषि ने पाण्डु महाराज को निःसन्तान होने का शाप दे दिया था।

दुर्वासा मुनि ने बहुत पहले ही कुन्ती को एक मन्त्रोपदेश दिया था और बता दिया था कि इस मन्त्र-पाठ से वह जिस देवता का आह्वान करेगी, वह आकर उसे पुत्रोत्पत्ति का वरदान दे जायेंगे।

कुन्ती ने जब यह बात पाण्डु से बताई, तब उसने राय दी कि सब से पहले धर्मात्मा पुत्र हो तो अच्छा।

पति की सम्मति से कुन्ती ने धर्मदेव का आह्वान किया और उनके वर-प्रसाद से युधिष्ठिर नामक पुत्र पाया।

इसके बाद पाण्डु महाराज की इच्छा हुई कि क्षत्रियों के लिए बाहु-बल भी आवश्यक है। अतः कुन्ती ने बाहु-बल के प्रतीक पवनदेव की आराधना की और भीम-से बलवान पुत्र की माता बनी। इस तरह पञ्च पाण्डव पैदा हुए।

इन में भीम का जन्म अद्भुत था।

भीम के पैदा होने के बाद, दसवें दिन, कुन्ती स्नान करके नदी से लौट रही थी। पति भी साथ था। सहसा एक भयङ्कर बाघ गरजता हुआ सामने आ गया। बाघ को देखते ही कुन्ती काँप उठी और एक टीले पर चढ़ गई।

यों हड़बड़ा कर जब वह टीले पर चढ़ रही थी कि अनजान में ही गोद से बच्चा गिर गया। यह देख कर पाण्डु महाराज ने तीर से बाघ को मार डाला। घबराहट में बच्चा पत्थर पर गिर पड़ा था, पर उसे चोट जरा भी नहीं आई थी। उलटे बच्चे के आघात से वह पत्थर ही टूक-टूक हो गया था। जैसे पालने में झूल रहा हो, यों वह बच्चा खुशी से हँस-खेल रहा था। उसके अद्भुत बल को देख कर माँ-बाप को महान आश्चर्य हुआ।

क्रयाधिकारी

ब्रह्मदत्त जिस समय काशी का राजा था, बोधिसत्व उस राज्य का एक 'क्रयाधिकारी' हाकिम था।

'क्रयाधिकारी' के पद पर वही नियुक्त होता था जो राज्य के लिए आवश्यक वस्तु-वाहन की परख-पहचान करने और उनकी कीमत कूतने में चतुर हो।

बोधिसत्व काशी-राज्य के लिए आवश्यक हाथी-घोड़ों, सोने-चाँदी की परीक्षा करता और उनकी कीमत कूत कर, उनके सौदागरों को पैसा दिया करता था।

राजा ब्रह्मदत्त भारी शक्की और कन्जूस था। इसलिए वह हमेशा शक करता रहता था कि यह बोधिसत्व सब वस्तुओं का ज़्यादा दाम देता रहता है। यह तो मेरे राज्य का दिवाला ही निकाल देगा। एक दिन ऐसा सोच कर, उसने खिड़की के दरवाज़े खोले और किले के पिछवाड़े नज़र दौड़ाई। वहाँ अपने किसी परिचित आदमी पर उसकी नज़र पड़ी।

बस, बगैर सोचे ही उसने उसे बुलवा भेजा और बोधिसत्व के स्थान पर 'क्रया-धिकारी' नियुक्त कर लिया।

राजा ने उम्मीद की थी कि यह अपना आदमी हाथी-घोड़ों के मोल-तोल में राज्य का फ़ायदा कर दिखाएगा।

लेकिन हुआ उल्टा। यह नया 'क्रयाधि-कारी' भोंदू था। उसे हाथी-घोड़े के गुण-दोष उनकी पहचान-परख और कीमत-कूतका कुछ भी शऊर न था। इसलिए जब कभी हाथी-घोड़े आदि खरीदने और मोल-तोल करने का मौका आता तो वह यों ही कुछ अंट-शंट बोल बैठता था—उसके लिए न उसके पास कोई कसौटी थी न आधार था।

टि. वि. श्रीनिवास

इस बेढंगे मोल-तोल से व्यापारियों को भारी घाटा उठाना पड़ता था। लेकिन घाटा होने पर भी, राज-दरबार के अधिकारी से, कुछ कहने में अपने को असमर्थ पाकर, सकपकाए हुए सौदागर, जो भी कीमत लगाई जाती मिलती, लेकर चुपचाप चल देते थे।

एक दिन उत्तरी प्रदेश से एक घोड़े का सौदागर, पाँच सौ बढ़िया नस्ल के घोड़े लेकर, काशी-राज के दरबार में आया। राजा ने तुरन्त अपने नए क्रयाधिकारी को बुलवाया और कहा कि इन घोड़ों की जाँच-पड़ताल करके दाम लगा दो।

क्रयाधिकारी ने आकर उन घोड़ों की जाँच-पड़ताल की और तपाक से हुक्म-नामा लिख दिया—'पाँच सेर चावल देकर उस सौदागर को विदा कर दो और पाँच सौ घोड़ों को ले जाकर शाही अस्तबल में बाँध दो।'

अपने भाग्य और भगवान को कोसते हुए सौदागर दरबार से चला गया। लेकिन दूसरों की तरह चुपचाप घर न जाकर वह सीधे भूत-पूर्व क्रयाधिकारी बोधिसत्व के पास पहुँचा और अपना दुखड़ा सुना कर उसकी सलाह और सहायता माँगी।

सब कुछ सुनकर बोधिसत्व ने गंभीर होकर कहा—'भाई, पहले तुम अधिकारी के पास जाओ और खुश करने के लिए उसे कुछ घूस दो। फिर कहो—'हुजूर ने घोड़ोंका जो दाम लगाया है, वह बहुत ठीक है; लेकिन पाँच सेर चावल का दाम कितना होता है, मेहरबानी करके आप यह भी दरबार में जरा बता दें, तो बड़ा अच्छा हो।'

बोधिसत्व ने फिर कहा—'इसके लिए अधिकारी अगर राज़ी हो जाय, तो कल उसे राजा के दरबार में ले जाओ। उस समय मैं भी वहाँ मौजूद रहूँगा और बाकी बातें देख लूँगा।—'

बोधिसत्व के कहे मुताबिक वह सौदागर उसी रात को उस भोंदू क्रयाधिकारी के पास पहुंचा और अकेले में उसकी मुट्ठी गरम कर के धीरे से अपनी बात कही।

घूस पाकर वह लालची अत्यन्त खुश हुआ और बोला—'यह कौन-सी बड़ी बात है! मैं राजा को सब-कुछ समझा दूँगा। तुम इसकी कोई चिन्ता न करो।'

दूसरे दिन काशी-राज का दरबार खचाखच भरा था। मन्त्रीगण तथा सभी प्रधान पदाधिकारी वहाँ उपस्थित थे। राजा की इच्छा से उस दिन बोधिसत्व भी हाज़िर हुआ था।

सौदागर उठा और हाथ जोड़ कर बोला—'सरकार, मेरे पाँच सौ घोड़ों का जो एक पसेरी चावल दाम लगाया गया, वह बहुत ठीक है। उसके बारे में मुझे कुछ भी कहना नहीं है। परन्तु मेरे मन में एक छोटा-सा सन्देह पैदा हो गया है। हुज़ूर उसे दूर कर दें। एक पसेरी चावल का दाम इस राज्य में कितना होता है, हुज़ूर!'

राजा को इन सब बातों की कोई खबर न थी। इसलिए सरल-भाव से उसने अपने नए अधिकारी से पूछा—पाँच सौ घोड़ों का कितना दाम लगाया गया है!'

क्रयाधिकारी ने लापरवाही से कहा—'हुज़ूर! एक पसेरी चावल।'

राजा ने फिर पूछा—'बहुत अच्छा! तो अब यह भी बता दो कि जब पाँच सौ घोड़ों का दाम एक पसेरी चावल होता है, तब एक पसेरी चावल का दाम कितना होगा?'

बुद्धू क्रयाधिकारी बिना सोचे-विचारे बोल उठा—'एक पसेरी चावल का दाम और कितना होगा, सरकार—यहाँ, काशी और

उसके सामन्त-राज्यों को मिला कर जितना हो सकता है—सिर्फ़ उतना ही।'

इस अद्भुत जवाब को सुनते ही मन्त्री-मण्डल और प्रमुख-दरबारियों के हँसते-हँसते पेट में बल पड़ गए। उस कोलाहल-ध्वनि से सारा दरबार गूँज उठा। लोग क्रयाधिकारी की मखौल उड़ाने लगे—'राज्यों की कीमत लगाना अब तक हम कितना कठिन मानते आ रहे थे, लेकिन आज मालूम हुआ कि समस्त काशी-राज्य की कीमत केवल एक पसेरी चावल है। वाह, कैसी गजब की बुद्धि है इस क्रयाधिकारी महोदय की!'

उसी समय बोधिसत्व उन लोगों के सामने आया और बोला—'भाइयो, इस क्रयाधिकारी महोदय ने जो कुछ कहा है, वह सोलहो आनी सही है। उसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं। आप लोग उनकी हँसी मत उड़ाइए। उन्होंने पाँच सौ घोड़ों का दाम पाँच सेर चावल बताया और पाँच सेर चावल का दाम सामन्त-राज्य-सहित समस्त काशी-राज्य का दाम लगा दिया। इससे सिद्ध यह हुआ कि इन पाँच सौ घोड़ों का दाम सामन्त-राज्य-सहित सारे काशी-राज्य के मूल्य के बराबर है। इस तरह यह स्पष्ट हो गया कि जो दाम इन पाँच सौ घोड़ों का गया लगाया है, वह एक निश्चित आधार पर है और एकदम मुनासिब है।'

बोधिसत्व की बात सुन कर सब लोग विस्मित हो उठे।

उसके बाद सच-झूठ का पता सब को लग गया। बस, काशी-राज की आँखें खुल गईं। उसने तुरन्त उस भोंदू को पद-च्युत कर दिया और उसकी जगह पर फिर से बुद्धिमान बोधिसत्व को क्रयाधिकारी बना दिया।

[गिरिदुर्ग के स्वामी भीमसिंह ने पिता को मार कर पुत्र को पाला। युद्ध-क्षेत्र से खबर भेजने पर उसके दुर्ग के सारे सैनिक किला छोड़ कर गए। इधर गुप्त शत्रुओं ने सिर उठाया और उसके एक बन्दे को मार डाला। आगे पढ़िए!]

उस रात रामनगर में भीमसिंह और उसके सिपाही आराम से सोए। तड़के ही उठ कर भीमसिंह अपने काम में लग गया। वह बड़ा ही कड़ा आदमी था। डरा-धमका कर या लालच दिखा कर, किसी न किसी तरह काम बना लेना ही उसका एक मात्र लक्ष्य था।

उस दिन सवेरे जब विजयसिंह बची-खुची सेना लेकर रामनगर पहुँचा तो भीमसिंह अपने कमरे में बैठा हुआ था। उसी कमरे में एक लड़का भी बैठा हुआ था, जिसकी उम्र दस बारह साल से ज्यादा न थी।

विजयसिंह घोड़े से उतर कर जल्दी-जल्दी अन्दर घुसा। भीमसिंह ने सिर उठा कर उसकी तरफ देखा और कहा—'विजय! तू यहाँ कैसे? रामसिंह कहाँ है?' विजय ने उन्हें सादर प्रणाम किया। चिट्ठी निकाल कर उन्हें दी और बोला—'लीजिए! यह पत्र पढ़िए! आपको सब कुछ मालूम हो जाएगा!' उस पत्र को पढ़ते ही भीमसिंह का चेहरा गुस्से से लाल हो गया। बोला—'इस पत्र में एक गाने के बारे में लिखा गया है। तुमने भी पढ़ लिया था वह गाना!' विजय ने सिर हिला कर 'हाँ'

कर दिया। 'क्या उस गाने में कहा गया था कि तुम्हारे पिताजी को सोमशर्मा ने मारा डाला था?' भीमसिंह ने पूछा। 'लेकिन सोमशर्माजी ने कहा कि वे कुछ नहीं जानते।' विजय ने जवाब दिया। 'ठीक तो कहा। मैं तुम्हें इन सब बातों के बारे में कभी-न-कभी फ़ुरसत से बताऊँगा। उस समय लोगों ने सोचा कि चण्डीदास ने ही उन्हें मारा। लेकिन दिन अच्छे नहीं थे। वह जान बचा कर भाग गया और इस बारे में कुछ नहीं किया जा सका। अच्छा, मैं तुम्हें एक पत्र लिख देता हूँ। जलपान करके तुम इसे लेकर तुरन्त लौट जाना!' भीमसिंह ने आदेश दिया। 'पत्र और किसी के जरिए भेज दीजिए न! मुझे भी अपने साथ लड़ाई में आने दीजिए न!' विजय ने विनती की। लेकिन भीमसिंह को यह पसन्द न आया। वह पत्र लिखने में लग गया और इधर विजय जलपान करने लगा।

जलपान करते करते उसे अचानक ऐसा लगा जैसे कोई पीछे से उसका हाथ छू रहा हो। एक कोमल कण्ठ ने उसके कानों में फुसफुसा कर कहा—'लड़के! मुझे पूरबडीह की राह बता सकते हो?' 'गिरिदुर्ग की राह चले जाना। नदी पर जा पहुँचोगे। वहाँ पूछ-ताछ करने से तुम्हें आगे की राह मालूम हो जाएगी।' विजय ने धीमे से जवाब दिया। पल भर बाद जब सर उठा कर देखा तो वह लड़का, जो अब तक उस कमरे में बैठा हुआ था, गायब था।

'अच्छा! उसी छोकरे ने मुझे 'लड़के!' कह कर पुकारा था! फिर कभी मिला तो कान उमेठ दूँगा!' विजय ने सोचा।

थोड़ी देर में भीमसिंह ने चिट्ठी लिख कर उसे दे दी। विजय उसे लेकर गिरि-दुर्ग को लौट चला।

उसके उधर जाते ही चन्द्रदुर्ग के स्वामी के यहाँ से, जो कोसलपुर के सामन्तों में से एक था, एक दूत भीमसिंह के यहाँ आया। उस दूत ने बताया कि 'सवेरे ही लड़ाई शुरू हो गई है और आप की मदद बहुत जरूरी है।'

लेकिन उस की बातों पर भीमसिंह का ध्यान था ही नहीं। वह चिल्ला रहा था—'करुणा कहाँ है? वह शैतान लड़की कहाँ चली गई!'

यह सुन कर एक सिपाही ने अरज किया—'हुजूर! लड़की कौन? हमने तो यहाँ कोई लड़की नहीं देखी!'

'अभी तक मेरे कमरे में एक छोकरा बैठा हुआ था न? वह लड़की थी बेवकूफ!' भीमसिंह ने कहा।

'लेकिन उसे तो आप 'करुणाकर' कह कर पुकार रहे थे! वह तो थोड़ी ही देर पहले घोड़े पर सवार होकर यहाँ से चला गया!' नारायण नाम के सिपाही ने कहा।

'फिर खड़े खड़े मुँह क्या ताक रहे हो? नारायण! तुम सिपाहियों को लेकर उसका पीछा करो! उसे पकड़ कर गिरिदुर्ग ले जाना और वहीं रखना! समझे!' भीमसिंह ने गरज कर कहा। नारायण सिपाहियों को लेकर करुणाकर का पीछा करने निकला।

विजय जो बहुत आगे निकल गया था, गिरि-दुर्ग के नज़दीक के एक दलदल के पास पहुँचा। वहाँ उसे दलदल में फँसा हुआ एक घोड़ा दिखाई दिया। वह सोचने लगा—'सवार भी कहीं नज़दीक ही होगा।' इतने में उसे एक लड़का दिखाई दिया। यह वही लड़का था जिसने जलपान करते वक्त विजय से पुरवडीह की राह पूछी थी। उसने उस लड़के को बुला कर अपने घोड़े पर चढ़ा लिया।

थोड़ी दूर जाने के बाद उसने पूछा—'लड़के! तुम्हारा नाम क्या है?' 'मेरा नाम करुणाकर है।' उस लड़के ने जवाब दिया। 'भीमसिंह तुम्हारे क्या होते हैं?' 'कुछ नहीं होता! वह मुझे जबर्दस्ती पकड़ लाया था। अब भी अगर मैं उसके चंगुल में फँस गया तो खैर नहीं। इसलिए मैं भाग कर पूरबडीह जा रहा हूँ लड़के!' छोकरे ने जवाब दिया।

'फिर लड़के कहते हो! मैं क्या तुमसे छोटा हूँ! तुम भीमसिंह से भाग रहे हो! तुम्हारी मदद करने से मेरी भी जान पर आ बनेगी। मैं क्यों नाहक अपना गला फँसाऊँ!' विजयसिंह ने कहा। बस, वह छोकरा तुरन्त गिड़गिड़ा कर उससे माफी माँगने लगा।

आखिर विजयसिंह को तरस आ गया। उसने कहा—'डरो नहीं! मैं तुम्हारे ऊपर कोई खतरा न आने दूँगा।'

वह यों उसे धीरज देता ही रहा था कि पीछे से किसी के चिल्लाने की आवाज़ आई। तब तक वे दोनों घाट पर पहुँच गए थे।

विजयसिंह के पुकारने पर मल्लाह दौड़ा आया। वह विजय को जानता था। करुणाकर की ओर देख कर उसने पूछा—'यह कौन है?' 'मेरा रिश्तेदार है!' विजय ने कहा।

मल्लाह करुणाकर को सर से पाँव तक गौर से देखने लगा। विजयसिंह ने कहा—'बेहूदे की तरह क्या घूरते हो?' मल्लाह ने जो करुणाकर को देख कर हँसने लगा था, अपनी हँसी दबा ली।

वह नाव को घाट से हटा कर दूसरी ओर ले जाने लगा। यह देख कर विजय को बहुत आश्चर्य हुआ। उसने कारण पूछा तो नाव वाले ने एक पेड़ की तरफ़ इशारा किया। उस पेड़ की डालों पर एक आदमी कमान पर तीर चढ़ाए खड़ा था। 'कौन आ रहा है?' वह चिल्लाया।

'कोई भी हो तुम्हें क्या!' विजय ने भी चिल्ला कर कहा। मल्लाह चिल्ला ही रहा था—'यह विजय है, और कोई नहीं' कि एक तीर सन्नाता हुआ आया और विजय के घोड़े के कलेजे में चुभ गया। यह गड़बड़ी देख कर करुणाकर तो उछल कर किनारे कूद गया; लेकिन विजय के कूदने के पहले ही घोड़ा गिर गया, नाव उलट गई। विजय भी पानी में गिर पड़ा।

किसी तरह तैर कर विजय किनारे पहुँच गया। करुणाकर खड़ा खड़ा उसकी राह देख रहा था। वहाँ जङ्गल घना था। दोनों दौड़ कर भागने लगे। लेकिन करुणाकर थक कर थोड़ी ही देर में लँगड़ाने लगा।

तब विजय करुणाकर को सहारा देकर उसे ले जाने लगा। थोड़ी दूर जाने के बाद उसने करुणाकर से कहा—'मुझे अब मालूम हो रहा है कि तुम्हें देख कर मल्लाह क्यों हँस रहा था! तुम बहुत ही कमज़ोर और नाज़ुक-बदन दिखाई देते हो। इसलिए उसने तुम्हें लड़की समझ लिया।' 'नहीं, नहीं!' करुणाकर झट से बोला। लेकिन शरम से उसके गाल लाल हो गए। 'नहीं कैसे! तुम्हें देख कर ऐसा ही भ्रम होता है! उस बेचारे की कोई गलती नहीं!' विजय ने कहा। वे दोनों इस तरह थोड़ी ही दूर गए थे कि सामने से एक हरिण भागता हुआ नज़र आया। उसे देख कर विजय के मन में शक पैदा हो गया। उसने एक ऊँचे पेड़ पर चढ़ कर देखा तो दूर नदी के किनारे कुछ चलते हुए धब्बे से दिखाई दिए। शक सच ही साबित हुआ। दोनों जल्दी जल्दी कदम बढ़ा कर आगे बढ़े।

थोड़ी देर बाद वे जङ्गल के छोर पर पहुँचे! इतने में कोई आहट हुई। तुरंत विजय और करुणाकर एक पेड़ के तने की ओट में छुप गए। सामने के पेड़ पर खड़ा

एक तीरंदाज दूर दूर तक ताकता हुआ पहरा दे रहा था।

'चलो, बाईं ओर से भाग चलें!' विजय ने कहा। लगाह दोनों के लिए नई थी। इसलिए चौकन्ने होकर आगे बढ़ने लगे।

इतने में उन्हें किसी के गाने की आवाज सुनाई दी। दोनों रुक गए। देखा तो सामने एक बड़ा ही गहरा गढ़ा था। उसकी बगल में ही एक पुराना उजाड़ खण्डहर था। वहाँ एक चूल्हा भी सुलग रहा था। लुटेरों के भेस में एक आदमी चूल्हे के नजदीक ही लेटा हुआ सो रहा था। नजदीक ही और भी कुछ आदमी बेचैनी से लोटते हुए रसोई पकने का इन्तजार कर रहे थे। थोड़ी देर बाद जब रसोइए ने सीटी बजाई तो तीस-चालीस आदमी थालियाँ और कटोरे लेकर दौड़ते हुए आए और पङ्गत में बैठ गए।

सब से पीछे और भी एक आदमी जिसे देखने से उन सबका सरदार मालूम पड़ता था आकर बैठ गया। उसने सब लोगों से कहा—'भाइयो! जल्दी जल्दी खा लो! एक छोटा सा काम है!' भोजन समाप्त होने को ही था कि एक तीर सनसनाता हुआ आकर खण्डहर की दीवार में चुभ गया। शायद वे सभी इसी इशारे की राह देख रहे थे। क्योंकि तुरंत सब लोग जहाँ के तहाँ हाथ धोकर उठ खड़े हुए और तीर-कमान लेकर तैयार हो गए। सरदार ने उन लोगों से कहा—'भाइयो! या तो भीमसिंह या उसके कुछ बन्दे हमारे चंगुल में फँस गए हैं। याद रखना, सिर्फ अभयसिंह का ही नहीं, हमें बहुतों का बदला चुकाना है।' पल में लुटेरे सभी ओझल हो गए।

विजय और कल्याकर ने सुख की साँस ली। 'चलो, अब हम लोग आगे चलें।' कल्याकर ने कहा। 'वाह भाई! तो क्या

तुम ने मुझे भगोड़ा ही समझ लिया है ?' विजय ने कहा। 'तो क्या तुम भीमसिंह के सिपाहियों को बचाओगे ? लुटेरों का सरदार क्या बोला-सुना नहीं ! अमरसिंह कौन थे ? तुम्हारे पिता नहीं थे ?' करुणाकर ने उत्तेजित होकर कहा। 'लुटेरों की बात का कौन भरोसा !' इतना कह कर विजय लौट चला। लाचार होकर करुणाकर को भी उसके पीछे पीछे चलना पड़ा।

यों वापस जाते जाते विजय को दूरी पर नारायण और उसके जत्थे वाले बेखबर आगे बढ़े आते दिखाई दिए। ज्यों ही वे लोग एक खुली जगह पर पहुँचे कि चारों तरफ से तीरों की बौछार होने लगी।

दुश्मन कहीं नहीं दिखाई देते थे। लेकिन तीरों की बौछार हो रही थी और नारायण के सिपाही एक-एक-कर ज़मीन पर लोट रहे थे। आखिर नारायण के सिवा कोई न बच रहा। नारायण भी एक बार चारों तरफ़ ताक कर वहाँ से भाग चला।

लेकिन वह भाग कहाँ सकता था ? दुश्मन उसकी हरेक चाल ताक रहे थे। झाड़ियों में से ठहाका मार कर हँसने की आवाज़ आई। नारायण के गुस्से का ठिकाना न रहा। उसने तीर चढ़ा कर एक झाड़ी की ओर निशाना लगा कर मारा। संयोग-वश वह एक लुटेरेको लग गया। वह चीख पड़ा और चारों तरफ़ से तीरों की बौछार होने लगी।

नारायण ने जान बचा कर भागने की कोशिश की।

लेकिन जाल में फँसा हुआ हरिण कहाँ भाग सकता था ? एक तीर जो आकर कलेजे में चुभ गया तो नारायण धड़ाम से नीचे गिर पड़ा। विजय दौड़ कर उसके पास पहुँचा।

उसको भी जान चली गई होती, अगर एक लुटेरा न चिल्लाया होता कि 'वह भमरसिंह का लड़का है। उसे मत मारो!'

नारायण कभी का ठण्डा हो गया था। विजय और करुणाकर गिरि-दुर्ग की ओर भाग चले। राह में उन्हें बहुत से सिपाहियों के जत्थे भागते दिखाए दिए। इससे विजय को विदित हो गया कि युद्ध में कोसलपुर की हार हो गई है। फिर भीमसिंह का क्या हुआ?

थोड़ी दूर जाने पर उन्हें एक डमरू की आवाज़ सुनाई दी। आवाज़ धीरे धीरे नज़दीक आती गई। थोड़ी देर में डमरू वाला भी सामने दिखाई दिया। उसे देखते ही करुणाकर चीख कर बेहोश हो गया। डमरू वाला और कोई नहीं; भीमसिंह था।

'अच्छा, विजय! तुम्हें तो अच्छा दोस्त मिल गया है। कितने दिन की जान-पहचान है?' भीमसिंह ने कहा।

'जी! वह राह में मिल गया! मगर आप इस भेष में कैसे?' विजय ने पूछा। 'क्या करता? युद्ध में हार हो गई! नारायण नहीं दिखाई दिया?' भीमसिंह ने पूछा।

तब विजय ने डरते डरते नारायण के जत्थे की जो दुर्गत हुई थी, सुनाई। बस, भीमसिंह की आँखें क्रोध से लाल हो गईं। वह बोला—'अच्छा, मैं गिरि-दुर्ग जा रहा हूँ। तुम अपने मित्र को लेकर पीछे से आना। हाँ, भूलना नहीं; उसे भी जरूर साथ ले आना।' इतना कह कर उसने विजय से कसम खिला ली कि वह करुणाकर को भी जरूर साथ ले आएगा और वहाँ से चला गया।

विजय को करुणाकर को साथ ले जाना ही पड़ा। वहाँ भीमसिंह उनका स्वागत करने के लिए तैयार खड़ा था।

[अभी और है।]

पाप-मोचन

किसी जमाने में एक भक्त रहा करता था। उसके मन में तीर्थ-यात्रा करने की बड़ी अभिलाषा रहती थी। लेकिन बेचारे के लिए घर छोड़ना बहुत मुश्किल था। क्योंकि घर में बूढ़े माँ-बाप के अलावा और कोई न थे।

इस हालत में भक्त का मन मायूस रहने लगा। 'इन बूढ़ों को घर पर छोड़ कर मैं यात्रा कैसे करूँ और मुझे मुक्ति कैसे मिले?' उसने सोचा। इस सोच में पड़े हुए भक्त का जी बहुत उचाट रहने लगा। कभी कभी विचार उठता—'चुपचाप कहीं चला जाऊँ!' लेकिन फिर मन न मानता।

यों दिन बीतते जा रहे थे। अन्त में उसे एक अच्छा मौका मिला। उसके रिश्तेदारों में से एक ने उस से कहा—'भैया! मैं जानता हूँ कि तुम्हारे मन में यात्रा कर आने की बड़ी अभिलाषा है। इसलिए तुम जाओ! जब तक लौट कर नहीं आओगे मैं तुम्हारे बूढ़े माँ-बाप की देख-भाल करता रहूँगा।' वह मौका पाकर बेचारा भक्त खुशी खुशी यात्रा करने निकला।

चलते चलते बहुत दिन बाद वह एक जङ्गल में पहुँचा। वह जङ्गल प्रयाग से एक सौ मील की दूरी पर था। भक्त ने बहुत से लोगों को कहते सुना था कि उस जङ्गल में मुनि कुक्कुट नाम के एक मुनि रहते हैं जिन के दर्शन मात्र से सब तरह के पाप दूर हो जाते हैं। इसलिए उस जङ्गल में पहुँचते ही वह भक्त मुनि कुक्कुट के दर्शन करने गया।

लेकिन वहाँ जाकर उसे बड़ी निराशा हुई। मुनि कुक्कुट एक मामूली गृहस्थ की तरह रहते थे। वे विद्वान भी नहीं थे और तप भी नहीं करते थे। वह भक्त सोचने लगा कि इन में कौन सी विशेषता है!

शंकरलाल

उस मुनि ने रसोई बनाई और अपने बूढ़े माँ-बाप को परोसी। खा-पी चुकने के बाद उसने आराम से उन्हें चारपाई पर लिटा दिया। जब वे सो गए और उसे फुरसत मिली तो उसने यात्री के पास आकर पूछा—'कहो! भैया! किस काम पर आए हो?'

'मुनिवर! मैं एक यात्री हूँ। आपके दर्शन करने आया हूँ। मैंने सुना है कि प्रयाग यहाँ से ज्यादा दूर नहीं है। क्या आप मुझे प्रयाग की राह बता सकते हैं?' भक्त ने विनीत स्वर से पूछा। 'लेकिन प्रयाग की राह मुझे नहीं मालूम। मैं कभी प्रयाग गया ही नहीं। बूढ़े माँ-बाप की वजह से घर छोड़ कर जाने का मौका नहीं मिलता।' उस भक्त ने जवाब दिया।

मुनिवर का यह जवाब सुन कर भक्त के हृदय से उनके प्रति रही-सही श्रद्धा भी चली गई। वह उनसे छुट्टी लेकर चला तो सोचने लगा—'इनकी बड़ी बड़ाई सुनी थी मैंने! बात कुछ समझ में नहीं आती।'

वह सोचते हुए वह थोड़ी ही दूर आगे बढ़ा था कि उसे तीन औरतें सामने से आती दिखाई दीं। भक्त को उन औरतों को देख कर बड़ा अचरज हुआ। क्योंकि वे इतनी कुरूप और भद्दी थीं कि देखते ही घृणा पैदा होती थी। उनके सारे बदन पर फोड़े-फुन्से भरे हुए थे। चेहरा इतना काला-कलूटा कि कोयला भी मात हो जाय। मालूम होता था जैसे सारे संसार की कालिख उन्हीं के चेहरे पर पुती हुई हो। भक्त ने सोचा कि उनसे पूछे कि वे कौन हैं और कहाँ जा रही हैं। लेकिन साहस न हुआ।

जब उसने पीछे मुड़ कर देखा तो मालूम हुआ कि वे मुनि कुक्कुट के आश्रम में प्रवेश कर गई हैं। उसका अचरज और भी बढ़ गया। वह वहीं खड़ा सोचने लगा—'ये

अभी लौटेंगी तो पूछूँगा कि वे कौन हैं?' थोड़ी देर बाद जब वे तीनों आश्रम से बाहर निकलीं तो उनको देख कर भक्त मुँहबाए ताकता खड़ा रह गया। क्योंकि उन तीनों की काया-पलट ही हो गई थी। कहाँ वे भद्दी काली-कलूटी औरतें और ये अलौकिक सुन्दरियाँ! वे नरक की प्रेतनियाँ थीं और ये स्वर्ग की अप्सराएँ। हुलिया तो मिलता था; लेकिन विश्वास न होता था कि ये वही हैं। इन तीनों का अपूर्व तेज देख कर आँखों में चका-चौंध पैदा हो जाती थी।

जब वे नज़दीक पहुँचीं तो भक्त ने उनसे पूछा—'बहनो! तुम कौन हो?'

तब उन औरतों ने जवाब दिया—'भैया! हम तीनों बहनें हैं। संसार हमें गङ्गा, यमुना और सरस्वती के नाम से पुकारता है। प्रयाग के निकट हम तीनों का सङ्गम होता है। देश देश से पापी लोग वहाँ हमारे जल में नहाने आते हैं। उनके सारे पापों का बोझ हमें लादना पड़ता है और हमें बहुत ही भद्दी और बिगड़ी हुई शकलें मिल जाती हैं। तुमने इसी रूप में हमें थोड़ी देर पहले देखा था।' 'तो फिर यह काया पलट कैसे हो गई?' भक्त ने पूछा। 'जब जब यह पापों का बोझ बढ़ जाता है तो हम मुनि कुक्कुट के दर्शन से अपने पाप दूर करके निजरूप में लौट जाती हैं।' बहनों ने जवाब दिया।

'अच्छा! ये इतने प्रभाव-शाली कैसे हो गए?' भक्त ने कहा। 'तप करने से नहीं; माता-पिता की सेवा करने से ही इनका इतना प्रभाव हो गया है!' उन बहनों ने जवाब दिया और अदृश्य हो गईं। भक्त के पश्चात्ताप का ठिकाना न रहा। वह वहाँ से सीधे घर लौटा। माता-पिता की सेवा में लग गया। फिर कभी तीर्थ-यात्रा का नाम तक न लिया।

नौ की करामात

(1) पिछले अंक में हमने नौ से भाजन करने पर मिलने वाले शेष की विशेषता देखी। अब हम यह देखेंगे कि शेष कैसे नहीं बच रहता। उदाहरण के लिए 16486 की संख्या लीजिए। इन सभी अंकों का जोड़ करने से २५ की संख्या मिलती है। ऊपर वाली संख्या में से मिश्र-संख्या को निकाल देने पर बच रहता है 16,461. इस संख्या को नौ से भाजन करने पर 1829 होता है। कुछ भी बच नहीं रहता। इसी तरह अन्य संख्याएं।

प्रेषक—नारायण

(2) नौ से एक विचित्र जोड़ देखिए।

12	13	14	15	16	17	18	19	20
9	9	9	9	9	9	9	9	9
2	2	2	2	2	2	2	2	2
1	2	3	4	5	6	7	8	9

प्रेषिका—ललिता।

(3) कोई एक संख्या लीजिए—उदाहरण के लिए 64328. इन पांचों अंकों का जोड़ करने पर 23 की संख्या मिलती है। अब ऊपर की संख्या में से 23 निकाल लीजिए। 64305 बच रहता है। अपने मित्र से कहिए कि इन पांचों अंकों में से किसी एक अंक को याद कर ले और बाकी अंकों का कुल जोड़ बता दे। उदाहरण के लिए समझ लीजिए कि उसने चार का अंक याद कर लिया। अब लीजिए—आपके मित्र के याद किए हुए 4 को छोड़ 6305 की संख्या बच रहती है। इन सब को जोड़ने पर 14 मिलता है। इस चौदह को फिर जोड़ने पर 1+4=5 मिलता है। नौ में से इस पांच को घटा देने पर चार बच रहता है जो आप के मित्र की याद की हुई संख्या है।

(4) दस से शुरू करके एक तक के अंकों को एक कतार में लिख कर उस संख्या को नौ से गुणा कीजिए और गुणन—फल की विचित्रता देखिए।

$$\begin{array}{r} 10987654321 \\ 9 \\ \hline 98888888889 \\ \hline \end{array}$$

प्रेषक—गिरिजाशंकर।

उधेड़-बुन

किसी गाँव में एक तस्वीर बेचने वाला रहता था। उसे उस व्यापार में ज्यादा नफ़ा नहीं होता था। क्योंकि तस्वीर खरीदने वाले बहुत कम होते थे। तस्वीरें बहुत दिन तक दूकान में पड़ी रहती थीं; इसलिए कभी कभी घाटा उठा कर ही उन्हें बेच डाला करता था। घाटे में बेचने पर भी तस्वीरों के बिकने में मुश्किल होती थी।

एक बार वह व्यापारी किसी दूसरे गाँव गया। वहाँ पुरानी चीज़ें बेचने वाली बहुत दूकानें थीं। उन्हें देखते हुए आगे बढ़ते वक्त एक दूकान में एक तस्वीर पर उसकी नज़र पड़ी।

वह तस्वीर बहुत सुन्दर थी। जरूर किसी निपुण, नामी चित्रकार की बनाई हुई थी। मामूली चित्रकार कभी वैसा चित्र नहीं बना सकता था। लेकिन मुश्किल यह थी कि उस चित्र पर बनाने वाले का नाम नहीं था। व्यापारी ने दूकानदार से पूछा कि क्या यह चित्र बिकने को है? दूकानदार ने कहा—'हाँ!' चित्रकार ने पूछा—'क्या दाम?'

तब दूकानदार बोला—'भैया! जिन जिन लोगों ने यह चित्र देखा सबने यही कहा कि यह चित्र जरूर किसी नामी चित्रकार का, संभवतः रविवर्मा का बनाया हुआ है। लेकिन चित्र पर किसी के हस्ताक्षर नहीं है। इसलिए निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता और इसीलिए मैं दाम भी ज्यादा नहीं लेना चाहता। इस चित्र का दाम पाँच रुपए है। चाहे तो ले सकते हो!' उसकी बातें सुन कर व्यापारी सोच में पड़ गया। तब दूकानदार ने कहा—'मैंने यह तस्वीर बम्बई में खरीदी

रमण देसाई

थी। एक हफ़्ते बाद फिर वहाँ जाने का विचार है। इस बार जाने पर चित्र के बारे में पूछ-ताछ करूँगा। अगर यह साबित हो गया कि यह रविवर्मा का चित्र है तब तो इसकी कीमत बहुत बढ़ जाएगी। तब यह चित्र आपको सस्ता नहीं मिलेगा। इसलिए सोच-विचार कर अभी जो कुछ करना हो कीजिए!' व्यापारी ने तुरन्त पाँच रुपए देकर वह चित्र खरीद लिया।

अपने गाँव लौटने पर व्यापारी ने वह चित्र अपनी दूकान में टाँग दिया। इस चित्र ने सभी ग्राहकों को आकर्षित किया। बहुत से लोग उसे देखने भर के लिए आने लगे। सभी लोगों का यही ख्याल था कि हस्ताक्षर नहीं होने पर भी यह चित्र रविवर्मा का ही है। आखिर ग्राहक ने सौ रुपए देकर उसे खरीद भी लिया।

उस तस्वीर बेचने वाले के जीवन में यह एक अपूर्व घटना थी। उसने कोई भी चित्र इतने नफ़े में नहीं बेचा था। अपनी चतुरता और सौभाग्य पर वह फूला न समाया। उसके मन में विचार उठा—'मेरे इस सौभाग्य का कारण है वह दूकानदार। बड़ा ईमानदार आदमी था वह। सारी बातें साफ़ साफ़ बता दीं। वह मुझे यह चित्र इतने कम दाम पर न देता तो मुझे इतना मुनाफ़ा कभी न होता। इसलिए उचित तो है कि मैं अपने मुनाफ़े का आधा हिस्सा उसे भी दूँ!'

यह निश्चय करके व्यापारी ने सोचा कि दूकानदार को एक चिट्ठी लिख कर इस बात की सूचना दे देनी चाहिए। यह सोच कर वह टिकट खरीदने के लिए डाक-घर गया। लेकिन डाक-घर बन्द था। इसलिए न वह टिकट ही खरीद सका और न चिट्ठी ही भेज सका।

दूसरे दिन सवेरे फिर उसे इस बात की याद हो आई। उसने सोचा—'कल मैं बड़ी बेवकूफ़ी का काम करने चला था। दुकानदार को आधा हिस्सा देने की क्या ज़रूरत है? उसे मालूम था कि वह चित्र रविवर्मा का हो सकता है। उसने जान-बूझ कर ही वह चित्र मुझे पाँच रुपए में दिया था। इसलिए दुकानदार को दस रुपए भेजना ही काफी है। यह कुछ कम नहीं है।' यह कह कर उसने अपने मन को समझा लिया और काम में लग गया। शाम को उसे फिर एक बार इस बात की याद हो आई। मन में थोड़ी बेचैनी पैदा हुई। उसने सोचा—'मैं दूकानदार को दस रुपए तो भेज दूँगा। लेकिन इससे उसे ज्यादा फायदा न होगा। उलटे नुकसान ही ज्यादा पहुँचेगा। क्योंकि दस रुपए पाकर वह समझने लगेगा कि सभी आदमी इसी तरह ईमानदार और उदार-स्वभाव के होते हैं। इस से वह हरेक ग्राहक को एक देवता समझने लगेगा। इस के कारण अंत में उसे बड़ी निराशा होगी और बड़ी मुश्किलें झेलनी पड़ेंगी। इसलिए दस रुपए उसे भेजना ठीक नहीं।' उसने सोचा।
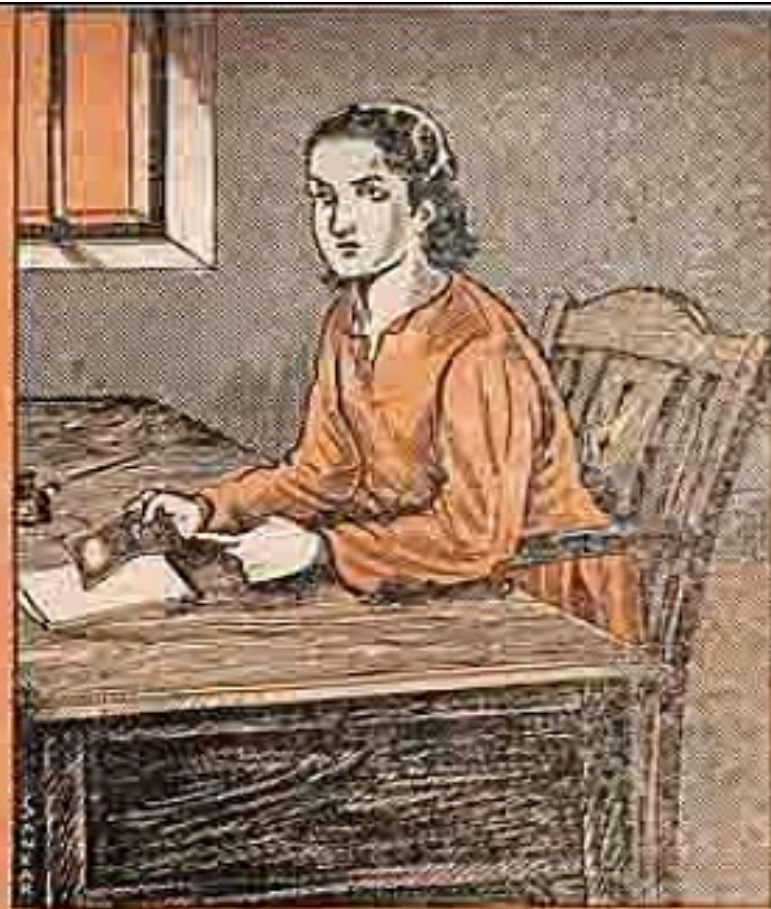
लेकिन इससे मन को शांति नहीं पहुँची। इसलिए थोड़ी देर बाद उसने सोचा—'अच्छा, दस रुपए भेजने की कोई ज़रूरत नहीं। लेकिन कुछ-न-कुछ तो भेजना ही चाहिए। नहीं तो यह कहा जा सकता है कि मैं बड़ा स्वार्थी हूँ।' इस तरह उसने निश्चय तो कर लिया; लेकिन उस दिन भी रुपए नहीं भेजे जा सके। दूसरे दिन कपड़े पहनते वक्त उसे फिर इस बात की याद हो आई। उसने सोचा—'भाग्य की मुझ पर कृपा थी। इसलि एवह तसवीर मेरे हाथों ज्यादा दाम पर बिकी। मैंने न कोई फरेब ही

किया और न किसी की जेब ही मारी। फिर जो कुछ भाग्य-वश मिल गया, उस में दूकानदार को हिस्सा क्यों दूँ? कोई जरूरत नहीं! मगर पहले उसे देने का निश्चय किया था वह निश्चय बदलने की भी कोई जरूरत नहीं। इसलिए एक रुपया भेज दूँगा। वास्तव में तो दूकानदार को यह लिख देना ही काफी है कि तुम ने मुझे जो चित्र बेचा था उस में मुझे नफा हुआ। लेकिन मैं उदार-स्वभाव का हूँ। इसलिए उसे एक रुपया भेज रहा हूँ और अपना एहसान जता रहा हूँ। इसके अलावा और क्या चाहिए!' यह सोच कर उसने एक रुपए का कागज निकाल कर अलग एक लिफ़ाफे में रखा और उसे जेब में रख कर डाक-खाने चला गया।

बाद को उसे इस बात की याद आई तो डाक-घर की ओर चला। राह में उसका एक जुआरी दोस्त मिला। वह उसे अपने साथ ले गया। मित्र को जुआ खेलते देख कर व्यापारी के मन में भी जुआ खेलने की इच्छा हुई। वह जुआ खेलने बैठा। उसका मन खेल में लग गया और वह डाक-घर जाने की बात ही भूल गया।

अंत में वह सब-कुछ हार बैठा। जब निराश होकर जेब टटोलने लगा तो वह लिफ़ाफ़ा हाथ लग गया जिस में उसने दूकानदार को भेजने के लिए एक रुपया अलग रखा था।

वह उस रुपए से जुआ खेलने लगा। उसका भाग्य पलट गया; बार बार जीत होने लगी। अंत में वह अपना पैसा वापस ही नहीं पा गया, बल्कि और भी कुछ जीत गया। शाम को हिसाब देखने पर मालूम हुआ कि उसने एक सौ रुपए जीते थे।

इस तरह एक रुपए ने जिसे उसने दूकानदार को भेजना चाहा था, उसे बचा लिया।

राजा की मूर्त्ति

एक शहर के बीचों-बीच, एक बड़े पत्थर के खम्भे पर, राजा की स्वर्ण-मूर्त्ति खड़ी थी। उस की दोनों आँखों में दो नीलम जड़े थे। राजाकी तल्वार में भी एक बड़ा रत्न जड़ा था। मूर्त्ति के ऊपर जब सूर्य-किरण पड़ती थी, तब राजा सचमुच आनंद-स्वरूप ही मालूम होता था।

एक दिन शाम को एक गौरैय्या उस शहर में आई। रात में कहाँ ठहरा जाय—सोचते हुए उस पंछी को वह राज-मूर्त्ति दीख पड़ी। ऊँचे पर रहने से अच्छी हवा मिलेगी और सारा शहर भी दीख पड़ेगा—यह सोच कर वह मूर्त्ति के चरणों पर ही बैठ गई। गौरैय्या जब सोने की तैयारी में थी कि कहीं से पानी की एक बूँद उस पर आ गिरी। उसने चारों ओर देखा। बादल का कहीं नाम न था। चाँद-तारे चम-चमा रहे थे। वह आश्चर्य कर ही रही थी कि फिर एक बड़ी बूँद आ टपकी। गौरैय्या को सन्देह हुआ। उसने सिर उठा कर देखा। मूर्त्ति ही आँसू बहा रही थी। उस के गालों पर आँसू बहते देख कर गौरैय्या का दिल पिघल गया।

गौरैय्या ने पूछा—'तुम कौन हो?'

मूर्त्ति ने कहा—'दुःख से अनजान रहने वाला मैं एक राजा हूँ।'

'फिर रो क्यों रहे हो?'

मूर्त्ति ने जवाब दिया—'जीते-जी मैंने कोई दुःख नहीं देखा था। राज-महल में दुःख का प्रवेश नहीं था। आराम की जिन्दगी थी। राज-महल के बाहर क्या हो रहा है—यह मैंने कभी सोचा ही नहीं। मरने के बाद

यह मूर्ति खड़ी कर दी गई। यहाँ से नगर में होने वाली सारी बातें मुझे दीख पड़ती हैं। मेरा हृदय शीशे का बना है और वह दया से पिघल रहा है। रोने के सिवा अब चारा ही क्या रह गया है मेरे लिए!'

एक मूर्ति मुझसे बोल रही है, यह ख्याल करके गौरय्या को भारी आश्चर्य हुआ।

मूर्ति ने फिर कहा—'देखो, वहाँ दूर पर एक गरीब का घर है। उस में एक चुचके-पिचके गाल वाली, झुर्रियों से भरी, बुढ़िया एक छोटा-सा दीया जला कर सिलाई करती है। बार-बार उसकी उंगली में सुई चुभ जाती है। पर, वह उस ओर ध्यान नहीं देती। पास ही खाट पर एक लड़का बीमार पड़ा है। वह भूखा है। नारंगी का रस माँग रहा है। लेकिन बेचारी माँ नारंगी कहाँ से लाए! यह दुःख देख कर मेरे आँसू नहीं रुक रहे हैं।—गौरय्या, क्या तू मेरी एक सहायता करेगी?'

'क्या?'—गौरय्या ने पूछा।

'देख, मेरी तलवार में एक रत्न जड़ा हुआ है। ले जाकर उस बुढ़िया को दे आ। मैं तो हिल-डोल नहीं सकता। देखती है न, मेरे पाँव पत्थर में जकड़े हैं।'—राजा ने कहा।

'दिन भर उड़ती उड़ती थक गई हूँ। फिर बड़े तड़के ही उठ कर परदेश चला जाना है।'—गौरय्या ने कहा।

'कष्टों में पड़े हुए लोगों के साथ हमें सहानुभूति दिखानी ही चाहिए।'—कह कर राजा की आँखें छल-छला उठीं।

गौरय्या को दया आ गई। उसने राजा की सहायता करने का निश्चय कर लिया। चोंच से ठोकरें मार-मार कर तलवार में जड़े उस रत्न को उसने निकाला और लेकर उड़ चली। गरीब बुढ़िया के घर

पहुँची। लड़का पीड़ा से छटपटा रहा था माता थक कर सो रही थी। उसकी बगल में रत्न रख कर वह अपने पङ्खों से लड़के पर हवा करने लगी। ठण्डी हवा लगने के कारण लड़के को नींद आ गई। गौरैय्या वहाँ से उड़ी और राजा के पास पहुँची। सब-कुछ बता कर बोली—'इतनी थक जाने पर भी मुझे बड़ी खुशी मालूम हो रही है!'

'सच, अच्छा काम करने पर सबको ऐसा ही मालूम होता है।'—राजा ने कहा।

दूसरे दिन गौरैय्या ने सारे शहर की सैर की। दूसरे गौरैय्यों ने इस नए पक्षी को एक खास अन्दाज से देखा। रात में जब चन्द्रमा उगा, तब वह गौरैय्या राजा के पास पहुँची और बोली—'आज जाती हूँ।'

'देख—दूर पर, उस टूटे-फूटे घर में, एक तरुण कवि रहता है। वह अपने सामने कागजों का ढेर लगाए, औंधा पड़ा है। जाड़े के कारण उसकी उँगलियाँ ठिठुर रही हैं, भूख के कारण उससे लिखा नहीं जाता है।'

इस बार गौरैय्या ने राजा से अधिक अनुरोध नहीं करवाया। उसने छूटते ही कहा—'अच्छा, आज रात भी मैं यहीं रह जाऊँगी। क्या एक रत्न उस कवि को भी दे आऊँ?'

'मेरे पास अब कोई रत्न नहीं है। लेकिन मेरी आँखों में दो नीलम हैं। एक निकाल कर उसे दे आ।'

'मैं तुम्हारी आँखों में चोंच नहीं मार सकूँगी!'—यह कहकर गौरैय्या रोने लगी।

'मेरे कहे मुताबिक तू कर'—राजा ने आग्रह किया।

लाचार होकर गौरैय्या ने एक नीलम निकाला और उसे चोंच में रख कर उड़ चली। कवि के घर में कोई दरवाजा नहीं था

इसलिए अन्दर जाने में उसे कोई तकलीफ न हुई। कवि आँखें मूँद कर लेटा था। इसलिए गौरैया का आना वह न जान सका। कुछ देर बाद जब थकावट कुछ कम हुई तब उसने आँखें खोलीं और देखा कि बगल में नीलम पड़ा है। उसने सोचा—

'मेरी कविताओं की प्रशंसा हो रही होगी। इसीसे, किसी ने यह भेंट भेजी है।'

दूसरे दिन गौरैया फिर सारे शहर में उड़ती फिरी और चन्द्रोदय होते ही राजा के पास लौट कर बोली—'मैं जा रही हूँ—यही कहने आई हूँ।'

यह सुन कर दीन भाव से राजा ने कहा—'गौरैया, एक रात और मेरे पास रह जा।'

'नहीं, नहीं, बुलबुल मेरी राह देख रहे होंगे। मेरे कारण तुम ने एक रत्न और एक नीलम खोया। अगले जाड़े में इधर आ आऊँगी और एक रत्न और एक नीलम तुम्हें ला दूँगी। अभी मुझे विदा दो।'

'गौरैया, दूर पर एक छोटी लड़की दीखती है। वह दियासलाई बेच कर जीती है। पैर फिसल जाने के कारण उसकी दियासलाई नाली में गिर गई है। खाली हाथ घर जाने से बाप उसे रुलाएगा। इसी से रो रही है। मेरी आँख का यह दूसरा नीलम निकाल कर तू उसे दे आ।'—राजा ने कातर होकर कहा।

'जरूरत समझो, तो आज भी मैं तुम्हारे पास रह जाऊँगी। लेकिन इस नीलम को मैं नहीं निकाल सकूँगी। तुम एकदम अंधे हो जाओगे।'—गौरैया ने हठ किया।

'इसकी मुझे कोई चिन्ता नहीं। तू मेरे कहे अनुसार कर।'

गौरैया को राजा की दूसरी आँख भी खोदनी पड़ी। उस को ले जाकर वह लड़की

के पास रख आई। नीलम को देखते ही लड़की उछल पड़ी—'अहा! कैसा सुन्दर है!'—और आँसू पोंछे बगैर ही घर की ओर दौड़ पड़ी।

गौरय्या राजा के पास पहुँची और कातर होकर बोली—'मैं तुम्हारे पास ही रहूँगी। अंधे होकर अब तुम अकेले कैसे रहोगे?'

'नहीं, नहीं; तेरे लोग तेरी प्रतीक्षा में होंगे। अब तू उनके पास चली जा।'

'नहीं, मैं यहीं रहूँगी।'—कह कर गौरय्या ने वह रात भी राजा के चरणों पर बिता दी।

दूसरे दिन गौरय्या शहर में नहीं गई। राजा के कन्धे पर बैठ कर अपने भ्रमण-वृत्तांत उसे सुनाती रही। कितनी ही विचित्र बातें सुनने के बाद राजा बोला—

'लेकिन सब से विचित्र बात तो है मानवों की कष्ट-कथा। गौरय्या, तू मेरे इस नगर में रह और घूम-घूम कर मुझे इस की बातें सुनाती जा।'

गौरय्या नगर में घूमने लगी। किसी धनी के घर में दावत हो रही थी। खाने के बाद जो जूठी पत्तलें फेंकी जाएंगी, उन अनाज कणों की प्रतीक्षा में, भुक्खड़ों की भीड़ दीवार से सटी बैठी थी। गन्दे गली-कूचों में, कोने-नुकड़ों में, दुबके-पड़े भूख से कराहते, अनेक नन्हें बच्चे गौरय्या को दीख पड़े। गौरय्या ने जाकर राजा से ये बातें कहीं।
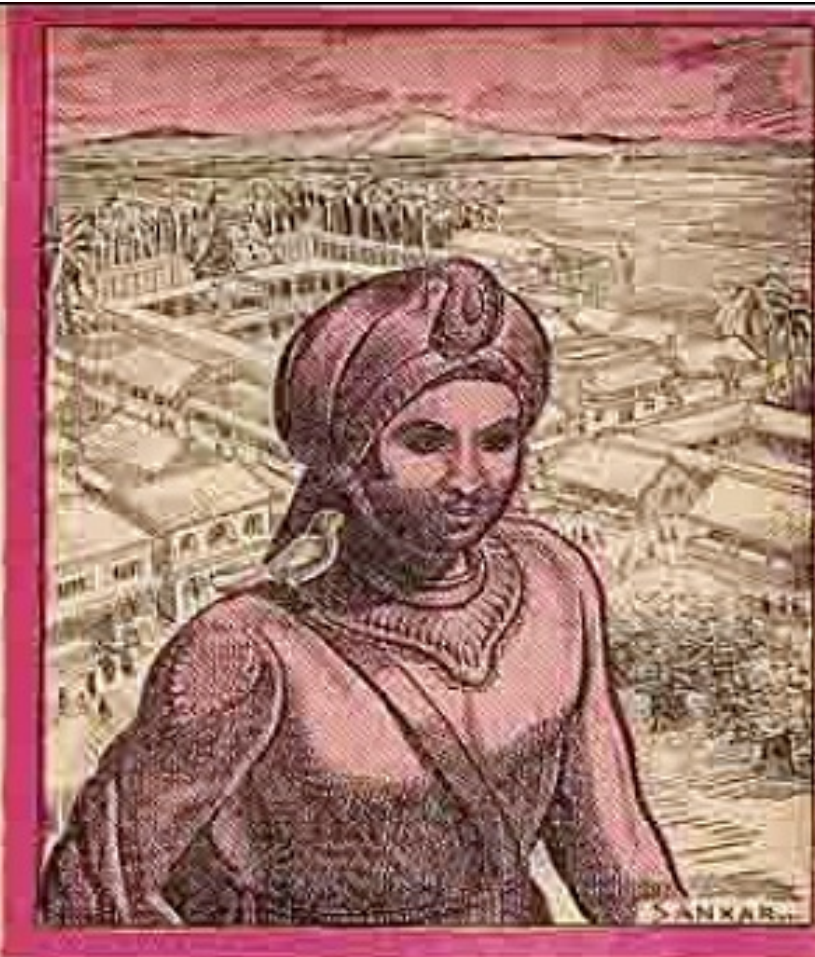
राजा ने कहा—'मेरा सारा शरीर सोने की परतों से ढँका है। इन्हें तू अपनी चोंच से उधेड़ डाल और ले जाकर दीन-दुखियों में बाँट दे। इस प्रकार उनका कष्ट कुछ कम हो जाएगा।'

गौरय्या सोने की परत को उखाड़-उखाड़ कर गरीबों के घरों में गिराने लग गई। अन्त

में राजा के शरीर पर काँसे के सिवा और कुछ नहीं रहा। लेकिन गरीबों के बच्चे अब खुशी से उछल-कूद रहे थे।

पाला पड़ने लगा। गौरैय्या को सर्दी सहन न हो रही थी। फिर भी उसने राजा का साथ नहीं छोड़ा। वह मौत के पास पहुँच गई थी। बचने की कोई आशा न देख आखिरी बार वह राजा के पास आई और बोली—'क्या मैं तुम्हारा हाथ चूम लूँ?'

'हाथ ही क्यों, मेरे होंठ ही चूम ले। अब तो अपने देश जा रही है न।'

'अब मैं दूर-देश की यात्रा करने जा रही हूँ। लौट नहीं सकूँगी!'—गौरैय्या ने विह्वल होकर कहा।

होंठ चूमते जाकर गौरैय्या गिरी और राजा के चरणों में ढेर हो गई। इसी समय विश्व-ब्रह्माण्ड में एक भारी विस्फोट का शब्द हुआ। राजा का हृदय दो टुकड़े हो गया।

सवेरा हुआ। नगर के गण्य-मान्य लोग उधर से गुज़रे तो उस भग्न-मूर्ति देख कर बोले—'अब यह मूर्ति असुन्दर हो गई। इससे नगर की शोभा बिगड़ जाएगी।'

यों वह मूर्ति वहाँ से हटा दी गई।

एक बार भगवान ने देव-दूतों से कहा—'उस नगर से मुझे दो अनमोल चीज़ें ला दो।'

देव-दूत सारे नगर की छान-बीन करते रहे। आखिर राजा का वह दो-टूक हृदय और गौरैय्या की पिलरी-पसलियाँ चुन कर वे भगवान के पास ले गए। उन देवोपम वस्तुओं को देख कर भगवान की खुशी का ठिकाना न रहा।

सुजान अनुज

गिरि-दुर्ग राज्य का अधीश्वर था क्षेमेन्द्र। उसके पास एक अविश्वासी सेनापति था। वह स्वार्थी सेनापति हमेशा इसी बात की चिन्ता में रहता था कि राजा कब मरे और कब मैं उसका राज्य हथिया लूँ। राजा के मरते ही, कुछ ही दिनों में, राज्य सेनापति के हाथ में चला गया। यों राज्याधिकारी होने पर वह धूर्त राजवंश के प्रति अत्यन्त क्रूर हो उठा।

क्षेमेन्द्र के तीन पुत्र थे— नन्द, सुनन्द और आनन्द। सेनापति के अत्याचारों को न सहन करके ये तीनों राज-पुत्र किसी वीरान प्रदेश में चले गए। उसके पास ही एक सुन्दर कुटिया थी। वहाँ एक बूढ़ा और उसकी बेटी दीख पड़ी। उन्होंने थके-माँदे राजकुमारों को अन्दर ले जाकर आव-भगत की और कुटिया में ही रात बिताने का आग्रह किया। रात होने पर तीनों भाई एकान्त में बैठ गए और आपस में विचार करने लगे कि खोया हुआ बाप का राज्य कैसे प्राप्त किया जाय। अँधेरे में उन्हें बैठे देख कर बूढ़े की बेटी इन्दुमती एक दीपक जला कर वहाँ रख गई। फिर वह भी उनके पास ही बैठ गई और उनकी बातचीत सुनने लगी।

सब से बड़े भाई नन्द ने कहा— 'दुनियाँ में आदमी को चाहिए अधिकार। हाथ में अधिकार होने के कारण ही तो सेनापति ने हमारा राज्य हड़प लिया।'

दूसरा भाई सुनन्द बोला— 'धन रहे तो उसके साथ अधिकार भी आ जाता है। फिर अधिकार के लिए कोशिश क्यों की जाय?

रामकुमार दुबे

छोटे भाई आनन्द ने अपने मन की बात नहीं बताई। वह इन्दुमती की ओर देखता बैठा रहा। दोनों भाइयों ने पूछा—'भाई, तुम भी तो कुछ कहो।' 'वही तो सोच रहा हूँ'—कह कर वह चुप रह गया।

सवेरा हुआ। तीनों भाई कुटिया से बाहर निकले। सामने के मैदान में बनजारों का एक दल जाता दीख पड़ा।

नन्द बोला—"मैं ईशान दिशा में जाता हूँ। ठीक दस सालके बाद एक बड़ी सेना के साथ लौटूँगा। हम फिर यहीं मिलेंगे।'—कह कर वह चला गया।

सुनन्दने कहा—'मैं वायव्य दिशा में जाता हूँ और दस सालके बाद खूब धन-दौलत के साथ वापस आऊँगा।'

फिर दोनों ने जिज्ञासा-भावसे छोटे भाई की ओर देखा।

आनन्द बोला—'मैं भी इसी समस्या में उलझा हुआ हूँ। दस सालके बाद मैं भी इसी कुटिया में मिलूँगा।'

भाइयों के बीच की यह बातचीत बूढ़ा और उसकी बेटी—दोनों सुन रहे थे।

काल-चक्र तेजी से घूमने लगा।

* * *

दस साल के बाद—

उस कुटिया के फूल-पौधे बढ़ गए थे और पर्णशाला के ऊपर अच्छी शोभा रहे थे। इन्दुमती बरसा के गोद में एक सुन्दर शिशु को लिए, मैदान की ओर देख रही थी कि एक ओर से घुड़सवारों का दल और दूसरी ओर से पैदल सेना, भार-वाही ऊँट और खच्चर, आते दिखाई दिए। कुछ ही देर में वह सारा मैदान सैनिकों से भर गया। सैनिक और जानवर कतारों में खड़े हो गए। एक आजानु-बाहु उन्हें आज्ञा दे रहा था।

दूसरी दिशा से जानवरों की एक और लंबी कतार आने लगी। उन की पीठ पर जगमग चमकते रत्न-राजियों के बोरे लदे थे। मूंछों पर ताव देता एक लम्बोदर उनका अधिपति दीख पड़ा।

आजानु-बाहु और लम्बोदर में परस्पर कुशल-प्रश्न हुए। नन्द ही वह आजानु-बाहु था और सुनन्द ही लम्बोदर।

सुनन्द ने कहा—"अब मैं इस दुनिया में कोई भी काम कर सकता हूँ। उसके लिए पर्याप्त धन मुझे प्राप्त हो गया है।"

बड़े भाई नन्द ने अपनी सेना की ओर उँगली उठाते हुए कहा—'यह मेरी सेना है। मैं इसका स्वामी हूं। इसके बल से ऐसा कोई काम नहीं जिसे मैं साध न सकूँ।'

दर्प से हँसते हुए सुनन्द ने कहा—'तुम्हें इस सेना का गर्व है! लेकिन तुम भूल रहे हो—अपने धन से मैं तुम्हारी सारी सेना को खरीद सकता हूं। और इस तरह अपने राज्य पर अधिकार कर सकता हूँ।"

नन्द ने कहा—'सैन्याधिकार को तुम समझते क्या हो! आज्ञा देने भर की देर है, तुम्हें और तुम्हारी दौलत को पल मारते मेरी सेना लूट ले सकती है।'

जब दोनों भाई यों बहस कर रहे थे कि छोटा भाई आनन्द, हँसता हुआ, सामने आ खड़ा हुआ। उसके दोनों हाथों में एक-एक बच्चा था। पीछे-पीछे एक शिशु को गोद में लिए, इन्दुमती भी आई। दोनों भाइयों ने आश्चर्य से अपने अनुज को देखा। वे अपना-अपना बखान करने लगे। फिर इन दस वर्षों में तुमने क्या किया—ऐसी प्रश्न-सूचक दृष्टि उन्होंने उस पर डाली।

अपने बच्चों की ओर देखते हुए आनन्द ने इशारा किया—'यही सब!'

दोनों भाई फिर उलझ पड़े। उन को बड़ा गर्व हो रहा था कि वे बहुत बड़ा काम कर आए हैं। आनन्द दोनों भाइयों को घर के भीतर ले गया और उन की सुख-सुविधा का इन्तजाम करने लगा।

कुछ शान्त होने पर उसने उन्हें एक चिट्ठी दिखाई। गिरिदुर्ग की प्रजा ने वह चिट्ठी भेजी थी।

आनन्द ने कहा—'हमारा द्रोही वह दुष्ट सेनापति मार डाला गया। प्रजा ने आकर मुझ से अनुरोध किया कि मैं जाकर राज्य-सूत्र अपने हाथों में ले लूँ। यों बराबर पत्र आते रहे। पर मैं तुम लोगों की प्रतीक्षा करता रहा। पिता का राज्य हासिल करने के लिए अब तुम्हें कष्ट उठाने की जरूरत नहीं रही। इस के लिए न धन चाहिए, न सेना।''

अपने इस सुजान अनुज के काम से दोनों भाई परम प्रसन्न हुए।

कागज के बर्तन में पानी गरम करना !

मामूली कागज़ से, दोने की शकल का बर्तन तैयार करके, उसमें लोहे के बर्तन की तरह, हम पानी गरम कर सकते हैं !

सुनकर सबोंको बड़ा आश्चर्य होगा। लेकिन इसे कर दिखाना एकदम आसान है।

कागज़ से बर्तन बनाना और फिर उसमें पानी गरम करना विस्मय की बात जरूर है, लेकिन उसके बनाने का नियम तो देखो :—

साधारण कागज़ ले लो और उसे, बगल में बनाए रेखा-चित्र के अनुसार, चौकोर या आयताकार रूप में, चारों तरफ़ से और पेंदे से भी, एक आकार देकर मोड़ दे दो। मोड़ बिखरे नहीं; इसलिए दो सूइयाँ चुभो दी जायँ।

ठीक पेटी की तरह तैयार हुए उस कागज़ के दोने को अब हाथ में ले लो।

दोनों तरफ़ में चुभी सूइयों में धागा डाल कर लटका दो अथवा संभव हो तो, हाथ को जलाए बग़ैर, उसे पकड़े रहो।

छलकार बग़ैर उसे लबालब पानी से भर दो। पानी से भरे उस दोने को अब आँच पर चढ़ा दो।

तुम को डर होगा कि आँच लगते ही कागज़ जल जाएगा। लेकिन डरने की कोई बात नहीं है।

आँच पर कागज़ जरा भी नहीं जलेगा और देखते-देखते, थोड़ी ही देर में, पानी गरम होकर खौलने लगेगा।

यह देख कर तुम्हारे दोस्त एकदम दङ्ग रह जाएँगे और तुम्हारी तारीफ के पुल बाँधने लग जाएँगे।

धूर्त्त-सम्मान

भुवनपुर राज्य का राजा अवनीन्द्र था। एक दिन वह अपने दरबार में बैठा था कि राज-दूतों ने मुश्कें चढ़ा कर, एक दुबले-पतले आदमी को, उसके सामने ला खड़ा किया।

'कौन है यह?' —कठोर स्वर में राजा ने पूछा।

'सरकार, यह है धूर्त चतुरी। अब जाकर कहीं पकड़ा गया है।' सुख की साँस लेते हुए राज-दूतों ने जवाब दिया।

'इसे प्राण-दण्ड का हुक्म देता हूँ। ले जाकर इसे इमली की डाल से लटका दो।'—राजा का हुक्म हुआ।

'दया दिखाइए, हुज़ूर!' अत्यन्त दीन भाव से चतुरी ने कहा—'आप राजा हैं। इसलिए आप तलवार के बल से जी रहे हैं। मैं मामूली आदमी हूँ, इसलिए चालाकी से जीता हूँ। किसी भाँति जीना तो है न, सरकार।'

राजा ने चतुरी से कहा—'मेरी तलवार का मुकाबला करने वाला तो दुनिया में कोई नहीं है। क्या तेरी चालाकी का भी कोई जोड़ नहीं है?'

'नहीं है, सरकार, नहीं।'—चतुरी ने निधड़क कहा।

'ऐसी बात! अच्छा, तो तेरे बुद्धि-बल की थाह लेने के वास्ते मैं तुम्हारी तीन परीक्षाएँ लेने जा रहा हूँ।'—राजा ने गम्भीर होकर कहा।

'बुद्धि-बल वालों के लिए असंभव नाम का कोई काम है ही नहीं, सरकार।'—मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए चतुरी ने कहा।

राजा के कहने से राज-दूतों ने चतुरी की मुश्कें खोल दीं। राजा उसे किले के

रामकुमार

बुर्ज पर ले गया और दूर पर हल जोतते हुए एक किसान को दिखा कर बोला —'देखो, हल में जुते बैलों को, बिना किसान के मालूम हुए, ले आना होगा। यह है पहली परीक्षा।'

चतुरी राजा से विदा लेकर चल पड़ा। खेत के पास खड़े जङ्गल में जाकर वह दबे-पाँव घुसा और छिप कर मीठे स्वर में गाने लगा।

'कौन गा रहा है?'—हल जोतना रोक कर वह किसान भागो और देखने लगा। कहीं कोई न दीख पड़ा तो हल-बैल को छोड़ कर, तन्मय भाव से, वह जङ्गल में घुसा।

चतुरी इसी ताक में था। तुरन्त बैलों के पास दौड़ गया। फिर कमर से चाकू निकाला और बैलों के सींग और पूँछ काट कर उन्हें वहीं ज़मीन में इस तरह गाड़ दिया जिससे वे कुछ-कुछ दीख पड़ते रहें। फिर उन मुण्डे और पूँछ-कटे बैलों को मार-पीट कर उसने जङ्गल में खदेड़ दिया।

इतने में किसान जङ्गल से बाहर आया। बहुत कुछ ढूँढने पर भी जब गाने वाले का कोई पता न चला, तब उसने अपने मन को यों समझा लिया—कोई गन्धर्व भूला-भटका इधर आ गया होगा।

और वह कर ही क्या सकता था। सीधे खेत में आया तो बैल—नदारद! लेकिन ज़मीन में गड़े उनके सींग और पूँछ कुछ-कुछ दीख रहे थे। इतने में चतुरी भी वहाँ आ गया और अनजान-सा पूछने लगा—'क्या हुआ, भाई?'

किसान ने सब कुछ उसे सुना दिया—।

चतुरी ने उसे सलाह दी—'बैल कहीं ज़मीन के अन्दर तो धँस नहीं गए? ज़रा पूँछ पकड़ कर खींचो तो सही।'

किसान ने ज्यों ही उन्हें पकड़ कर खींचा कि वे उसके हाथ में आ गईं।

'अरे, मेरे बैल तो दल-दल में डूब गए!'—यह सोच कर, अपने भाग्य को कोसता, वह किसान घर चला गया।

किले के बुर्ज पर से राजा अवनीन्द्र यह सब देख रहा था। मन-ही-मन उसने चतुरी की चालाकी को खूब सराहा।

कुछ देर के बाद चतुरी भी आ गया। राजाने कहा—'चतुरी, तुम्हारा बुद्धि-बल सचमुच अद्भुत है। अब दूसरी परीक्षा की बात सुनो—' आज रात को मेरे घुड़सालसे मेरा 'पंचकल्याण' घोड़ा चुरा लाना होगा।''

प्रणाम करके चतुरी चुपचाप चला गया।

उस के जाते ही घुड़साल में जाकर राजा ने रखवालों से कहा—'आज की रात तुम लोग खूब होशियार रहना और 'पंचकल्याण' पर खास नजर रखना।

चतुरी सीधे अश्व-पति के घर में घुस गया और चुपचाप उसकी पोशाक उठा लाया। उसे पहन कर जब वह घुड़साल में पहुँचा तो देखा कि पहरेदार खूब सजग हैं।

एक घुड़-सवार तो पंचकल्याण पर ही बैठा हुआ था।

चतुरी सब कुछ समझ गया। सीधे पहरेदारों के पास आकर बोला—'बहादुरो, चोर पकड़ लिया गया है। अब तक जग कर तुम लोगों ने जो तत्परता दिखाई, उस से राजा बहुत खुश हुए हैं। उन्होंने तुम लोगों के लिए यह शर्बत भेजा है।'—यह कह कर अपने पास की बोतल से थोड़ा-थोड़ा शर्बत निकालकर उसने पहरेदारों में बाँट दिया।

जागने की जरूरत अब न रही, यह सोच कर पहरेदारों ने शौक से वह शर्बत ओठों से लगा लिया। शर्बत में कोई नशीली चीज मिली हुई थी; पीते ही वे बेहोश हो

गए और छद्म-वेशी चतुरी, राजा के घोड़े पर चढ़ कर, निकल भागा।

कुछ देर बाद राजा फिर घुड़साल में आया और आश्चर्य से देखा कि सब पहरेदार बेखबर पड़े हुए हैं और वह 'पंचकल्याण' गायब है!

'इतनी होशियारी बरतने पर भी वह घोड़ा चुरा ले गया—राजा सोच ही रहा था कि चतुरी घोड़े पर से उतरा और सलाम करके राजा के सामने खड़ा हो गया।

हँसते हुए राजा ने कहा—'अब अन्तिम परीक्षा ली जाएगी। सुनो, रानी के जगे रहने पर ही, अगर तुम उसकी उँगली से, सोने की अंगूठी निकाल लाओगे—तो मैं तुम्हें माफ़ कर दूँगा।'

यह कह कर राजा रनवास में पहुँचा और रानी के पास जाकर बैठ गया। पहरेदारों को उसने पहले ही सावधान कर दिया था।

एक घंटे के बाद किसी के आने की आहट हुई। मुँडेर पर जाकर राजा ने नीचे देखा। दीवार से सटी एक सीढ़ी लगी थी। उस पर से कोई ऊपर आ रहा था। चतुरी के सिवा और कौन हो सकता है, यह सोचकर राजा ने एक हाथ से सीढ़ी पकड़ी और बिना देखे ही उस आदमी को ढकेल दिया। राजा ने जिसे ढकेला था, वह असली आदमी तो था नहीं। चतुरी ने आदमी का पुतला बना कर उसे रस्सी से लटका दिया था और खुद एक कोने में खड़े होकर, रस्सी के सहारे उसे सीढ़ी पर चढ़ते, देख रहा था कि—क्या होना है।

उस नकली आदमी के गिरते ही राजा मुँडेर से नीचे आ गया।

चतुरी यह सब देख ही रहा था।

राजा के उतरते ही चतुरी झटपट सीढ़ी से चढ़ गया और रानी के अन्तःपुर में जा कर

एक कोने में बैठा और, बदले स्वर में बोला—'अरे, जो सोचा था, वही हुआ। चतुरी सीढ़ी पर से गिर कर मर गया। अब तुम्हारी अंगूठी के लिए कोई डर नहीं रहा। फिर भी कुछ रोज अंगूठी पहने सोना अच्छा नहीं। इस लिए लाओ अंगूठी हिफाजत से रख दूं।'

नींद में झूमती हुई रानी ने यह सुनते ही उंगली से निकाल कर अंगूठी पास ही बैठे चतुरी के हाथ में रख दी।

अंगूठी हाथ में आते ही चतुरी भाग खड़ा हुआ।

कुछ देरके बाद राजा वहां आया और नींद में बेखबर पड़ी रानी को जगा कर चतुरी के बारे में कुछ कहने जा ही रहा था कि रानी ने आंखें खोल दीं। 'कितनी बार कहोगे एक ही बात! अभी-अभी तो कह गए थे और अंगूठी भी ले गए थे!'—झल्ला कर रानी बोली।

'अंगूठी—क्या अंगूठी वह ले गया!'—स्तंभित होकर राजा ने कहा। शीघ्र उसकी समझ में आ गया कि चतुरी ही अंगूठी ले भागा है।

सबेरा होते ही, अंगूठी हाथमें लिए, चतुरी राजा के सामने हाजिर हुआ। हंसते हुए राजा ने कहा—'चतुरी, तुम्हारी चालाकी सचमुच बेजोड़ है। प्राण-दंड रद करता हूं और 'धूर्त-सम्मान' के नाम से तुम्हें सौ एकड़ खेत इनाम में देता हूं। जाओ सुख से रहो।'

'सरकार की कृपा।'—हाथ जोड़ कर चतुरी ने राजा को प्रणाम किया।

चालाकी से प्राप्त इनाम का सुख चतुरी आज तक भोग रहा है।

कितना तेज चल सकते हो?

इस प्रश्न का समाधान जानना हो, तो इस के लिए एक सीधा उपाय है।

८० या १०० गज लंबा एक धागा ले लो। धागे के एक छोर में शीशे या लोहे का एक भारी टुकड़ा अथवा एक रोड़ा ही बाँध दो।

इस तरह बँधे धागे में, ४४ फुट की दूरी पर चिन्ह के लिए एक गाँठ डाल दो अथवा उसे मोड़ ही दो।

वहाँ से फिर ४४ फुट की दूरी पर, पहले की तरह, निशान लगाओ और इसी प्रकार ४४-४४ फुट पर निशान लगाते चले जाओ। अर्थात हर ४४ फुट की दूरी पर एक-एक निशान लगाना होगा।

उसके बाद सेकेन्ड सूई वाली एक घड़ी अपने हाथ में ले लो। अब पत्थर-बँधे छोर को जमीन पर रख दो और धागे को हाथ में लिए, साधारण चाल से, चलते जाओ।

तुम्हारे हाथ के धागे से, हर आधे मिनट में, जितने निशान गिरते जाएँगे, उतने मील के हिसाब से तुम, प्रति घंटा चलोगे।

कैसे?—यह भी सुन लो। एक मील में ५२८० फुट होता है। इस संख्या में अगर तुम ४४ से भाग दे दोगे, तो १२० निकल आएगा। अर्थात ५२८० (एक मील) में ४४ की संख्या १२० वाँ भाग होगी।

इसी तरह एक घंटे में ६० मिनट होते हैं। अर्थात उनके आधे मिनट के १२० हिस्से होंगे। एक घंटे में आधे-मिनट हुए १२०। यों एक घंटे के समय में, अर्थात् १२० आधे-मिनटों में, तुम एक मील का १२० वाँ भाग चल सकोगे

किसी समय एक जङ्गल में बिल्टू नामक एक भोला-भाला गरीब आदमी रहता था। 'पात-भरी सहरी'—सा उसका एक बड़ा परिवार था जिसका भरण-पोषण उसे अपने बाहु-बल से ही करना पड़ता था। तड़के उठना, कन्धेपर कुल्हाड़ी रख कर जङ्गल जाना, वहाँ से लकड़ियाँ काट कर गट्ठर उठा लाना और बाजार में जाकर उसे बेच देना—यही उसका हर रोज का काम था।

एक दिन जब वह लकड़ी काट रहा था, उसी समय उधर से जाते हुए एक साधु की दृष्टि उस पर पड़ी। उसके कष्टों को देख कर साधु को दया आ गई। बिल्टू को बुला कर उस साधुने पूछा—'भाई, तुम कौन हो? क्या नाम है तुम्हारा?'

"महाराज, मेरा नाम है बिल्टू। लकड़हारे का काम कर के गुजर करता हूँ।"—बिल्टू ने नम्रता से जवाब दिया।

साधु ने कुछ देर सोच कर कहा—'बिल्टू—बड़ा ही अच्छा नाम है तुम्हारा।'

कुशल-प्रश्न के बाद साधु फिर बोला—'भाई बिल्टू, दुनियाँ के झंझटों में पड़ कर, अपने स्वार्थी परिवार के लिए, तुम इतना कष्ट उठा रहे हो! क्या कभी भगवान को भी याद करते हो?'

'भगवान! .... कौन है वह? मेरे जाने-पहचाने भाई-बंधुओं में तो इस नाम का कोई नहीं है। और 'पात-भरी सहरी' सा परिवार लेकर मैं इधर-उधर की बातों में कैसे पड़ूँ, महाराज!—कातर होकर बिल्टूने जवाब दिया।'

बिल्टू की दीनता-भरी बात सुनकर साधु को आश्चर्य हुआ और कुछ गुस्सा भी आया।

उसने कुछ व्यंग से कहा—' अरे भाई, तुमने तो भगवान का भी नाम नहीं सुना है! जिसने हम सब को, इन पेड़-पौधों को, जङ्गल-पहाड़ को, सर-सरिताओं को और आँखों से देख पड़ने वाली इन समस्त वस्तुओं को बनाया है, उसी भगवान का नाम तुम नहीं जानते!' —यह कह कर साधु खिल-खिला पड़ा।

साधु को यों हँसते देख कर बिल्टू को ऐसा लगा जैसे वह कोई भारी अपराध कर बैठा हो। तुरन्त साधु के पाँवों पर गिर पड़ा और कहने लगा—' महाराज, संसार-सागर से तरने का कोई उपाय तो बता दीजिए इस अभागे को।'

यह देख साधु ने बिल्टू को दोनों हाथों से उठाया और कहा—'भाई, मोक्ष पाने में ही तो मानव-जन्म का साफल्य है। और मोक्ष पाने के लिए तपस्या करनी पड़ती है। नहीं तो मरने के बाद, याद रखो, कुत्ते या कौए होकर पैदा होना होता है।' यों साधु ने नाना तरह से उसे समझाया बुझाया।

बेचारा बिल्टू घबरा उठा। अब एक 'भगवान' भी उसके हृदय में घुसकर अनेक हलचल मचाने लगा।

साधु बिल्टू को दिल से आशीर्वाद देकर अपनी राह चला गया।

बिल्टू ने काटे हुए लकड़ी का गट्ठर माथे पर उठाया और भारी हृदय से पैर घसीटता हुआ गाँव की ओर रवाना हुआ। उस दिन लकड़ी बेचने से जो पैसे मिले उन्हें स्त्री के हाथ में देकर वह भगवान के ध्यान में डूब गया।

पति में यह परिवर्तन देख कर बिल्टू की
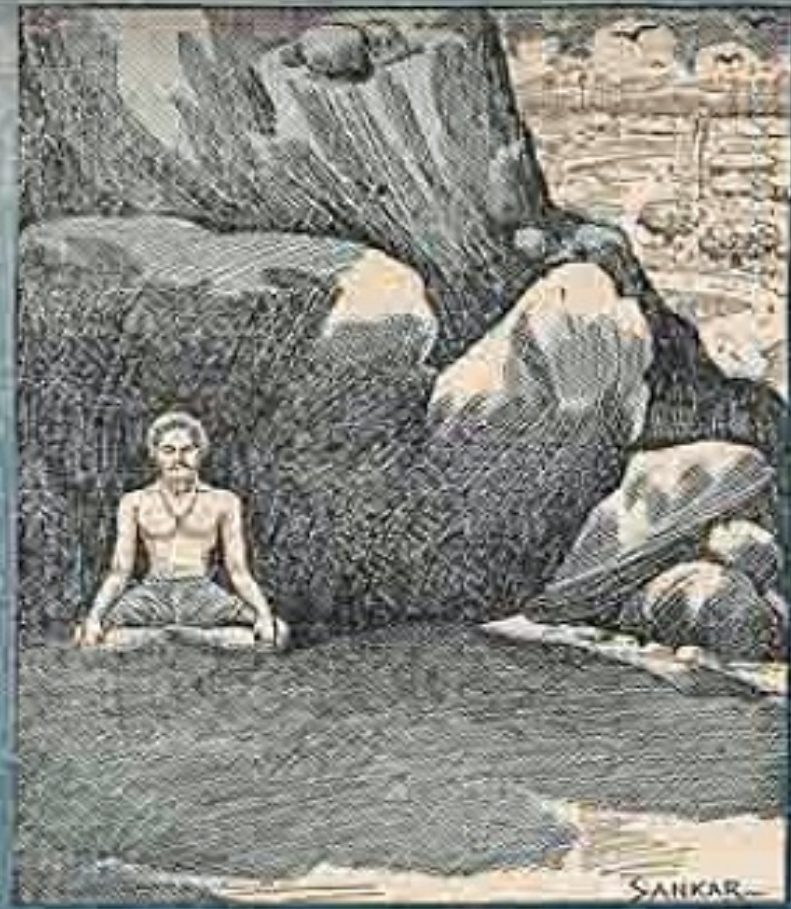
स्त्री पहले तो चकित हुई। लेकिन दूसरे दिन जब उसने देखा कि जङ्गल जाने के बदले वह उठकर भगवान का ध्यान कर रहा है, तब वह गुस्से से भर गई। और उसने झल्ला कर कहा—'समय तो हो गया है, फिर कुल्हाड़ी लेकर जङ्गल क्यों नहीं जाते हो?'

'नहीं, अब मैं लकड़ी काटने नहीं जाऊँगा। जङ्गल चला जाऊँ, तो मेरी आत्मा की हालत क्या होगी! लकड़ी ही काटता रहूँ, तो फिर भगवान की बात कौन सोचेगा!'—यों बिलट्टू बड़बड़ाया और बगैर समझे-बूझे साधु की बातें दुहराता चला गया।

पत्नी उस समय तो चुप रह गई।

यों एक-दो दिन और बीत गए। बिलट्टू सारा समय भगवान के भजन में ही काटने लगा। घर में छटांक भर दाना नहीं रह गया था। बाल-बच्चे भूख से छटपटा रहे थे। पति की इस विचित्र प्रवृत्ति को न सह कर पत्नी गाली-गलौज पर उतारू हो गई।

यह देख कर बेचारे बिलट्टू ने सोचा—'भगवान के भजन के लिए भी जब इस घर में गुंजाइश नहीं रही, तब यहाँ रहना ही क्यों?'

बस, विरक्त होकर सीधे सामने के पहाड़ की तरफ चल पड़ा। पास ही 'मन्त्र-पर्वत' नामक एक दुर्गम पहाड़ था। रात की तो बात क्या, दिन में भी कोई उस पहाड़ पर नहीं जाता था। लोगों का कहना था कि उस पर भूत-प्रेत, यक्ष-गन्धर्व आदि रहते हैं। भगवान के भजन में भूला हुआ बिलट्टू सीधे उसी पर्वत पर चला गया और लता-गुल्म से आच्छादित एक सघन-शीतल स्थान में बैठ कर भगवान के भजन में लीन हो गया।

यों कितना समय बीत गया, कहा नहीं जा सकता।

एक दिन जब वह ध्यान में बैठा था कि पास से ही कोई आवाज़ आई। लता-पता और डाली-टहनियों को हटा कर उसने इधर-उधर देखा। लक-दक कपड़ों में चम-चम चमकती दो बालाएँ पास ही पचीसी खेल रही थीं। बिल्टू चुपचाप देखने लगा था। ये लड़कियाँ कौन हैं, इस ओर उसका ध्यान ही नहीं गया। वह तो उनके उस खेल को ऐसे गौर से देख रहा था, जैसे वह भी उसमें एक साथी-खिलाड़ी हो।

पचीसी खूब जम रही थी। बिल्टू ज़मीन पर गिरने वाली हर कौड़ी को बड़े गौर से देखता था। सहसा एक लड़की ने बिसात पर की एक गोटी को ऊपर खिसका दिया।

'बेटी, वह चाल गलत है।'—बिल्टू सहसा बोल उठा।

भयभीत होकर लड़कियों ने बोलने वाले की ओर देखा।

दूसरे ही क्षण वे लड़कियाँ हरिन बन गईं और चौकड़ी भरती भाग खड़ी हुईं। यह दृश्य देख कर बिल्टू को सपने से जागने जैसा मालूम हुआ। तुरन्त उसे अपने घरबार, पत्नी तथा बाल-बच्चों की याद आ गई और एक बार सबको देख आने की इच्छा से वह उठ खड़ा हुआ।

थोड़ी ही देर में वह पहाड़ से उतर पड़ा। प्यास मालूम हुई। पास ही तालाब था। वहाँ गया और ज्यों ही झुक कर पानी पीने लगा, कि उसमें उसे एक बूढ़े का रूप दीख पड़ा। बिल्टू डर गया। 'यहाँ सब कुछ विचित्र है! असल में यह पहाड़ ही मायामय है।' सोचता हुआ वह घर पहुँचा।

लेकिन घर का वहाँ नामो निशान भी नहीं था। 'मेरा घर-बार क्या हो गया!'—बिल्टू चिन्तित हो उठा।

इतने में पानी का घड़ा उठाए एक औरत आती दीख पड़ी। बिल्टू ने उससे पूछा—'अरी मैया, यहीं बिल्टू लकड़हारे का घर-बार था। क्या तुम कुछ जानती हो उसके बारे में?'

अचरज से देखती वह औरत बिल्टू से कहने लगी—

'तीन पीढ़ियों के पहले कभी बिल्टू नामक कोई लकड़हारा यहाँ सपरिवार रहता था। एक दिन विरक्त होकर वह 'मन्त्र-पर्वत' पर चला गया और फिर नहीं लौटा—यह मेरी दादी कहा करती थी।'

यह सुनते ही बिल्टू की समझमें सब कुछ आ गया। एक बार अपने शरीर पर उसने नजर फेरी। तमाम झुर्रियाँ पड़ी हुई थीं। दाढ़ी के सफेद बाल घुटनों तक पहुँच रहे थे। आते समय उसे तालाब में जो रूप दीख पड़ा था, उस में इस में कोई फर्क नहीं था।—शरीर की शक्ति क्षीण हो गई थी। थक कर वह एक पेड़ के नीचे धम से बैठ गया। उसे देख कर तरस खाती हुई वह औरत जाने लगी कि बिल्टू ने उसे रुकने का इशारा किया। वह रुक गई। बिल्टू ने कहा—'मेरी एक बात है। उसे सारे गाँव में ही नहीं, जहाँ-कहीं गुञ्जाइश हो, सब जगह फैला देना।'

औरत ने पूछा—'क्या है वह बात?'

'भगवान के भजन में डूब अपने घर-बार को कोई न भूले। यह महा पाप है। ऐसा करने वाले लोग दूसरे जन्म में कुत्ते-कौए होकर पैदा होंगे।'

यह कह कर उसने उसाँस ली और वहीं पेड़ के नीचे ढेर हो गया।

कुछ देर के बाद झुंड-के-झुंड गाँव के लोग वहाँ आने और बिल्टू की कहानी कहने-सुनने लग गए।

वन-भूषण

अमेरिका के जंगलों में एक तरह की रंगीन चिड़िया पाई जाती है। देखने में वह बड़ी ही सुन्दर होती है। वह बहुत ही सुरीली आवाज में गाती रहती है। उसका कंठ-स्वर बहुत ही मधुर, गंभीर तथा साफ होता है। वह पक्षी जब आधी रात को गाने लगता है, तब सुबह तक एक-स्वर से गाता ही रह जाता है। खुशी से भर जाने पर, पूँछ और पंख फैला कर, वह नाचने-गाने लग जाता है। जब वह गाता है, तब ऐसा लगता है, जैसे नाना तरह के पक्षी मिल कर एक स्वर में, गा रहे हों।

अमेरिका वालों ने उस पंछी का नाम 'वन-भूषण' रखा है। सिर्फ गाने में ही नहीं, दूसरे पक्षियों की मखौल उड़ाने में भी 'वन-भूषण' बड़ा चतुर होता है। कभी-कभी वह बाज की भाँति भी चीख उठता है। यह सुन कर छोटी चिड़ियाँ सब डर कर छिप जाती हैं। कभी-कभी वह ऐसे बोलने लगता है, जैसे मादा नर को पुकार रही हो। नर-पक्षी बाहर निकल पड़ता है और किसी को न देख कर, ठगा-सा रह जाता है। इसी से इसका 'परिहास-पक्षी' नाम सार्थक हो जाता है।

यह पक्षी कभी-कभी बहेलिए को भी धोखा दे देता है। काला नाग इसका जानी दुश्मन होता है। इसके बच्चों को खाने के लिए नाग सर्र से पेड़ पर चढ़ जाता है और इसके घोंसले में घुस जाता है।

लेकिन 'परिहास-पक्षी' चुप नहीं रहता है। चढ़ते-उतरते समय वह साँप से भिड़ जाता है—चोंच, पंजों तथा पंखों से मार-मार कर उसे गिरा देता है। फिर उसे जमीन पर से उठा कर ऊपर उड़ जाता है और वहीं से पटक कर मार देता है।

गुड़गुड़

हमने देखा है एक पौधा
सब से अलग और सब से अनोखा।
बाग में इसका काम नहीं है
खेत में इसका नाम नहीं है।
इतनी ऊँची शाख है इसकी
इनसानों के मुँह तक पहुँचो।
पानी देने से लहराए
भूख लगे तो आग भी खाए।
सब से जुदा है इसकी निशानी
ऊपर आग और नीचे पानी।
जान इसकी एक बाँस में देखी
गुड़-गुड़ इसकी साँस में देखी।
निकला धुआँ एक साँस जो ले ली
बच्चो! बूझो तुम यह पहेली।

प्यारे बच्चो, जरा इस कुत्ते को तो देखो। किसी को ढूँढ़ता-सा दीख पड़ता है न। सच, देखते हो न, वहाँ एक टोकरा पड़ा है। उस टोकरे का मालिक कहाँ गया, पता नहीं टोकरे में खाने की कई चीजें हैं। देख-देख कर कुत्ते के मुँह में पानी भर रहा है। लेकिन डरता है कि कहीं मालिक न आ जाय। मालिक कहाँ है, कुत्ते को कोई बता सकेगा?

अन्तिम चित्र

वैशाख-पूर्णिमा को बुद्ध भगवान के जन्मोत्सव का पुण्य-पर्व पड़ता है। बुद्ध हमारे ही देश में अवतीर्ण हुए थे। फिर भी बौद्ध-धर्म का दूसरे देशों में ही अधिक प्रचार पाया जाता है। उन देशों में एक चीन भी है। वह हमारे पड़ोस में ही है। चीन अत्यन्त विशाल तथा प्राचीन देश है। जिस समय आज के बहुत से देशों को खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, और रहने-सहने का भी शऊर न था, उस समय चीन ने विश्व-विख्यात दीवार खड़ी करके अपनी सभ्यता की रक्षा की थी। वह दीवार दुनियाँ के सात आश्चर्यों में एक है।

हम चीन देश को कभी भूल नहीं सकते। क्योंकि चीनवासी ही हमारे लिए चीनी (शकर) और दीपावली में काम आने वाली आतिशबाजीके अद्भुत सामान भेजते आ रहे हैं। चीनी-मिट्टी के अनूठे बर्तन और मन-मोहक कागज़ी-फूल मशहूर हो गए हैं। जादू-गरी में चीन के लोग सानी नहीं रखते हैं। रेशम के कारबार पर भी उन्हीं की बपौती है। उस देश में 'कारमोरेंट' नाम का जल-पक्षी होता है। चीनी लोग उसके गले में एक अंगूठी पहना देते हैं। इसलिए वह मछली पकड़ तो लाता है, पर उसे खा नहीं सकता। चीनियों का रङ्ग शर्बती नीबू के समान पीला होता है। उनके पैर छोटे-छोटे और बाल चूहे का दुम की तरह होते हैं। वे अत्यन्त परिश्रमी और विनम्र होते हैं। बूढ़ों के प्रति बड़ा आदर-भाव रखते हैं। खर्च करने में उनकी मुट्ठी कसी होती है। मौत से जरा भी नहीं डरते हैं। परिस्थितियों के अनुसार अपने को बदलने में वे बड़े ही तत्पर होते हैं।

हमारे इस देश की तरह वहाँ की जन-संख्या भी बहुत बड़ी है। इसीसे बहुत-से लोग नदी-नालों में नावों पर घर बना कर ही गुज़र-बसर करते हैं।

चीनी भाषा के एक-एक अक्षर में एक-एक शब्द-चित्र अंकित रहता है। चीनियों ने ही सब से पहले कागज़, छापा-खाना, बारूद, समुद्री-जहाज़ों के लिए दिग्दर्शक-यन्त्र—आदि निकाले। ऐसे चीन-देश में पैदा हुए एक बालक को तुम एक बूढ़ी की गोद में देख रहे हो।

एक-रेखा-चित्र

उमाशंकर, प्रयाग

टाइप-राइटिङ्ग के चित्र

ताजमहल
वी. एम. राव, विजयनगर
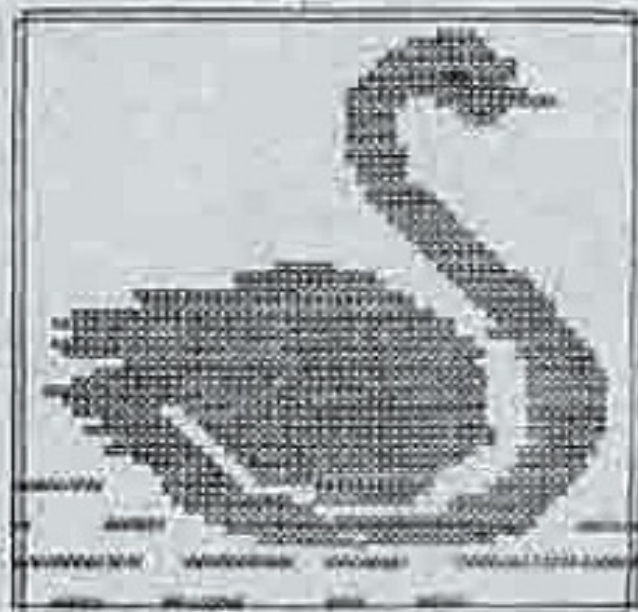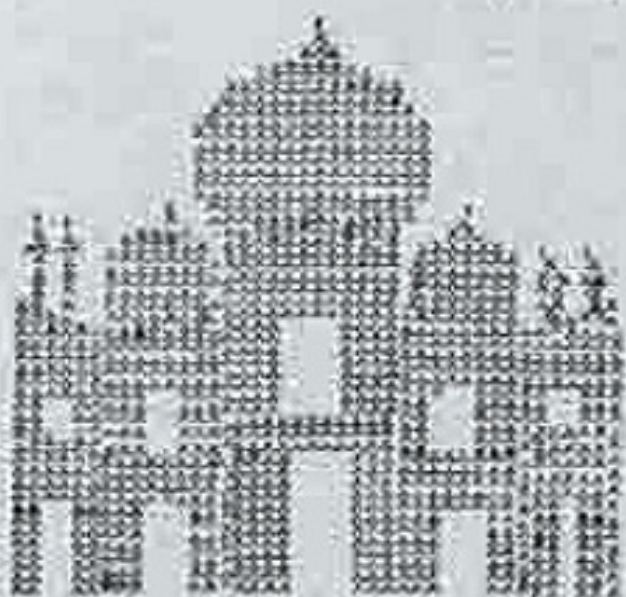
बतख
एस. वी. मूर्ति, इलाम

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अक्टूबर १९५३ :: पारितोषक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फोटो अक्टूबर के अङ्क में छापे जाएँगे। इनके लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर-सम्बन्धित हों। परिचयोक्तियाँ, पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर १० अगस्त के अन्दर ही निम्न-लिखित पते पर भेजनी चाहिए।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास-२६.

सितम्बर - प्रतियोगिता - फल

अगस्त के फोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १०) का पुरस्कार मिलेगा।

पहला फोटो : चक्रदेही   दूसरा फोटो : चक्रदेही

प्रेषक :— स. द. नर्वाटकर, १६-५-६ मौलीगुडा चमन, हैद्राबाद, दक्खिन.

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ प्रेषक के नाम-सहित अगस्त के चन्दामामा में प्रकाशित होंगी। उक्त अङ्क के प्रकाशित होते ही पुरस्कार की रकम भेज दी जाएगी।

चुटकुले

रमेश—कहो भाई महेश, कैसी तबीयत है तुम्हारी? महेश—ज्वर की चढ़ाई तो उतर गई, पर दर्द से कमर टेढ़ी है। रमेश—ईश्वर चाहेगा तो वह भी उतर जायगी।

—◇—

एक काना आदमी एक दिन सिनेमा देखने गया। जब वह टिकट खरीदने लगा तो उसने सिर्फ ढाई आने दिए। बाबू ने कहा—ढाई आने और लाओ। इस पर काने ने कहा—ढाई आने और क्यों? मैं तो एक ही आंख से देखूंगा।

—◇—

राम—श्याम! आश्चर्य-जनक बात सुनोगे? श्याम—क्या, कहो तो सही। राम—तेनसिंग [illegible] पर्वत की सब से ऊंची चोटी पर चढ़ [illegible] श्याम—इस में आश्चर्य क्या है, अगर [illegible]स भी उतनी बड़ी चोटी हो तो मैं भी [illegible]ता।

[पी. वी. रामचन्द्र]

एक आदमी ने बाजार जाते समय साइन बोर्ड पर पढ़ा कि यहां सस्ते दामों में सुन्दर बूट सेट मिलते हैं। उसने दुकान के अन्दर जाकर पूछा—भाई, यहां पर बूट कितने सेर मिलते हैं?

—◇—

मां ने बेटे से कहा—बेटा, आज का काम कल पर न छोड़ा करो। तब बेटे ने गम्भीर होकर मां से कहा—तो मां, कल जो मिठाई दोगी, वह आज ही दे देना।

—◇—

मास्टर—तुम बड़े मूर्ख हो। जब मैं तुम्हारी उम्र का था तो मजे से किताब पढ़ लेता था। विद्यार्थी—तो आप को कोई अच्छा मास्टर मिल गया होगा!

—◇—

एक नौकर बाजार से दो पैसे का दूध लाया। रास्ते में दूध में एक मक्खी गिर पड़ी। मालिक—दूध में मक्खी क्यों डाल कर लाया है? नौकर—तो क्या दो पैसे के दूध में हाथी डाल कर लाता?

[सुन्दरमल लोहिया]

—◇—

बताओ मैं कौन हूँ?

[पी. वी. रामचन्द्र]

मैं पांच अक्षर वाला भारत
का एक महान पुरुष हूँ।
मेरे नाम का पहला अक्षर
पर्वत में है, पर भूधर में नहीं।
मेरे नाम का दूसरा अक्षर
रूप में है, पर गुण में नहीं।
मेरे नाम का तीसरा अक्षर
शुरू में है, पर अन्त में नहीं।
मेरे नाम का चौथा अक्षर
रात में है, पर दिन में नहीं।
मेरे नाम का पांचवां अक्षर
ममता में है, पर प्रीति में नहीं।
बताओ— मैं कौन हूँ?

[परशुराम]

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26 and Published by him for Chandamama Publications, Madras 26, Controlling Editor: SRI CHAKRAPANI

Photo by A. L. Syed

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

राष्ट्र-प्रतीक

प्रेषिका
विमला प्रधान, नई देहली

CHANDAMAMA (Hindi) AUGUST 1953 Regd. No. M. 5452

चढ़ती धूप – ढलती छाया